
चन्दामामा



तब ब्रह्मदत्त काशी का राजा था। पाँच सौ व्यापारी नौका में समुद्र में यात्रा कर रहे थे कि वह नौका डूब गई। सिवाय एक के, जितने भी नौका में थे, वे मछलियों के शिकार हो गये। बचा हुआ, आदमी, समुद्र तटवर्ती करम्बिय नगर में पहुँचा और वहाँ भीख माँगने लगा।

वहाँ की जनता को उसकी बुरी हालत देखकर दया आई। उन्होंने उसको हर तरह की चीजें देनी चाही। "ये सब मेरे लिए क्यों? थोड़ा-सा भोजन, और पहनने के लिए कपड़ा मिल जाये तो काफी है।" उसने कहा। यह देख लोगों ने सोचा-"ओहो! यह कोई बड़ा तपस्वी है।" उन्होंने उसके लिए एक पर्णशाला बनवाई और उसमें उसको तपस्या करने के लिए कहा।

वह उसमें तपस्या करता रहा। वह करम्बिय महामुनि के नाम से मशहूर भी हो गया। उसकी कीर्ति दूर दूर तक पहुँची। उसके दर्शन के लिए राजा-महाराजा भी आने लगे। इस तरह आये हुए लोगों में, साँपों के राजा पण्ढरक और गरुड़ों के राजा के रूप में पैदा हुये बोधिसत्व, उसके विशेष स्नेहपात्र थे।

एक दिन, गरुड़ राजा ने करम्बिय को प्रणाम कर, उसके पास बैठकर कहा-"जब कभी साँप और गरुड़ों में युद्ध होता है तो अक्सर साँपों की अपेक्षा गरुड़ ही अधिक मारे जाते हैं। शायद हम यह नहीं जानते कि साँपों को कैसे पकड़ना चाहिये। जरूर इसमें कोई रहस्य है। क्या आप यह रहस्य साँपों से मालूम करके हमें बता सकेंगे?"

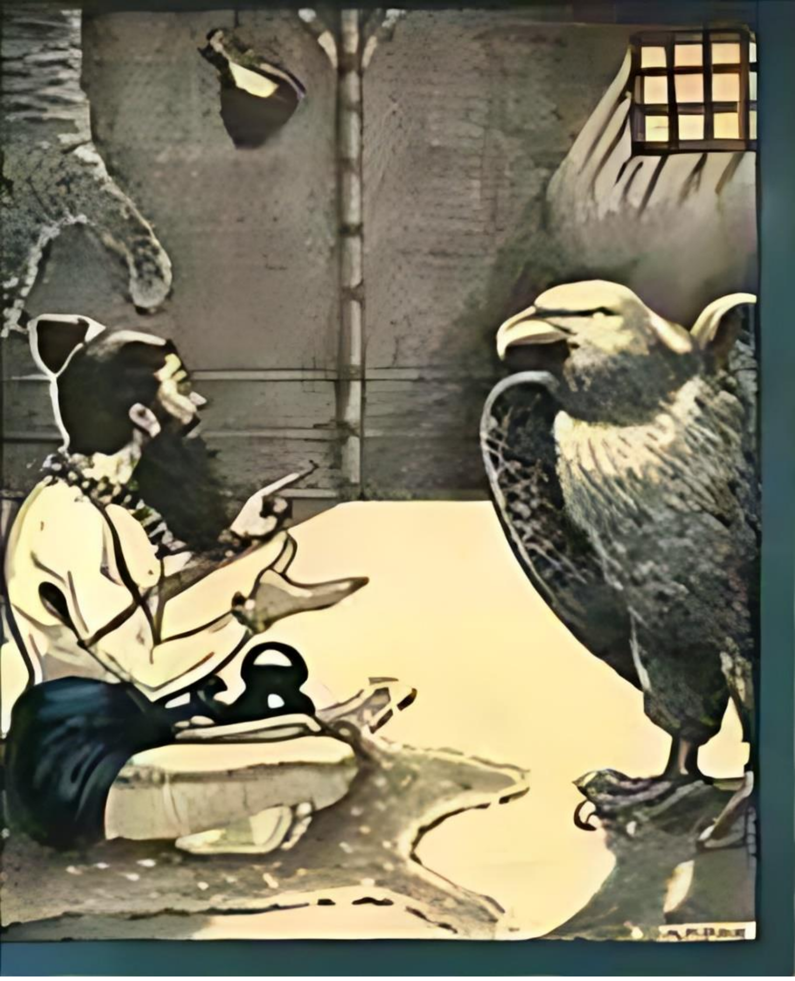
करम्बिय यह करने के लिए मान गया। गरुड़ राजा चला गया। जब बाद में सर्पराज उसके दर्शन के लिए आया तो करम्बिय ने उससे पूछा-"राजा! सुना है, गरुड़ तुम्हें पकड़ते ही मर जाते हैं। इसका क्या कारण है? शायद उनको आप लोगों को पकड़ना नहीं जाता। कैसे पकड़ जायें कि आपके सर्प झुक जायें?"

सर्पराज ने विनयपूर्वक इसका उत्तर यो दिया-"स्वामी, यह हमारा भेद है। यदि यह भेद मैने बता दिया तो मैं अपनी सारी जाति को धोखा दे रहा हूँगा। उनके नाश का कारण बन रहा हूँगा।"

"यह क्या? क्या तुम यह सन्देह कर रहे हो कि मैं यह भेद किसी और को बता दूँगा? यह कभी नहीं होगा। मैं सिर्फ यह जानने के लिए पूछ रहा हूँ कि यह रहस्य है क्या। मुझे बता देने से कोई हानि न होगी।" करम्बिय ने कहा।

सर्पराज ने यह कहकर कि वह भेद बता देगा, उनसे आज्ञा लेकर चला गया। जब वह अगले दिन दर्शन के लिए गया तो करम्बिय ने फिर पूछा, किन्तु





सर्पराज ने भेद न बताया। जब वह तीसरी बार आया तो करम्बिय ने पूछा-"आज तीसरी बार पूछ रहा हूँ, बताओ क्या भेद है? क्यों नहीं बताते?"

सर्पराज ने कहा-"स्वामी! मुझे यह डर लग रहा है कि आप यह भेद किसी और को बता देंगे।"

"मैं यह कभी न करूँगा। शपथ करता हूँ कि नहीं बताऊँगा।" करम्बिय ने कहा।

उसके शपथ करने पर, सर्वराज ने अपना रहस्य इस तरह बताया-

"हम बड़े बड़े पत्थर निगलकर, अपने शरीर को अधिक वजनदार बनाकर पड़े रहते हैं। जब गरुड़ हमारे पास आते हैं तो हम मुख खोलकर उनसे भिड़ आते हैं। गरुड़ हमारे सिर पकड़कर हवा में उड़ते हैं। हमारे वजन के होने के कारण, उनके शरीर का पानी ऊपर आ जाता है। इस कारण वे मर जाते हैं। अगर ये मूर्ख गरुड़, हमारे सिर की अपेक्षा पूछ पकड़कर उड़ें, तो हमारे मुख से पत्थर निकल पड़ेंगे, हमारा वजन कम हो जायेगा और वे हमें उड़ाकर ले जा सकेंगे। यही हमारा रहस्य है।"

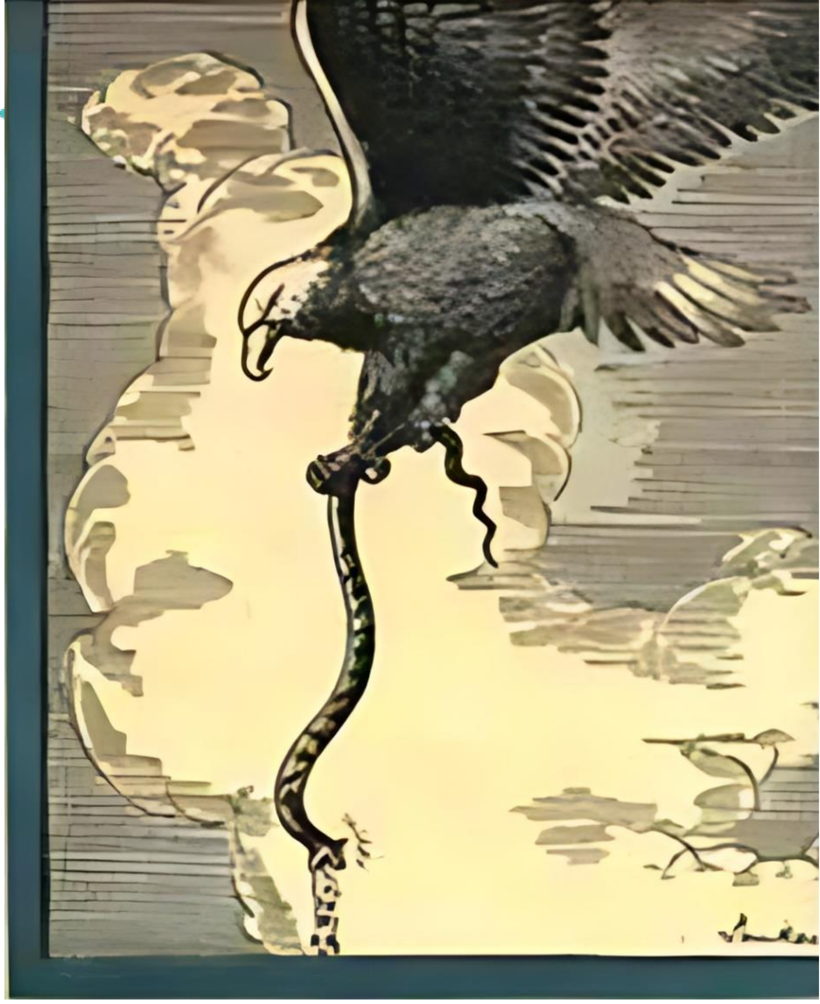
सर्पराज के चले जाने के बाद गरुड़ राजा ने आकर करम्बिय मुनि से पूछा-"स्वामी! क्या आपने सर्पराज से रहस्य मालूम कर लिया है?" करम्बिय ने सर्पराज का बताया हुआ रहस्य, गरुड़ राजा को बता दिया।

"इस सर्पराज ने बहुत अन्याय किया है। उसे ऐसा कोई रहस्य किसी दूसरे को नहीं बताना चाहिये था, जिसके कारण, सारी जाति के विनाश की आशङ्का हो। मैं अभी जाकर उसे पकड़ता हूँ।" पंख फड़फड़ाते, तूफान सा उड़ाते, वह

सर्पराज की पूँछ पकड़कर आकाश में उड़ गया।

सर्पराज, पूँछ के बल तो लटक ही रहा था। इसलिए मुख से पत्थर नीचे गिर गये। उसने दुख से कहा-"अरे, मैंने अपनी मौत खुद ही मोल ले ली। उसे मैंने महामुनि समझा था। उसकी बातों मैं आ गया और भेद बता दिया।" यह सुन गरुड़ राजा ने कहा-"मूर्ख! अपना रहस्य उस ढोङ्गी सन्यासी को बताकर क्यों दुख करता है? मौत से कोई नहीं बचता। पर प्रधान धर्म विवेक है। तेरी दुर्गति का कारण में नहीं हूँ, न सन्यासी है। तेरा अविवेक ही है। प्राणी के लिए माँ-बाप से बढ़कर कोई प्रेम-पात्र नहीं है। वैसे माँ-बाप को भी अपना रहस्य न बताओ। कितने ही बन्धुबान्धव होते हैं, मित्र होते हैं, रूपवती भार्या होती है, उनसे भी नहीं कहना चाहिये। जो अपना रहस्य रख सकता है, वह ही शत्रु को दूर रख सकता है।"

"महात्मा! मैं आपका उपदेश समझ गया हूँ। माँ जिस तरह अपनी सन्तान पर दया दिखाती है, उस तरह मुझपर भी आप दया



दिखाइये।" सपराज ने गरुड़ राजा से प्रार्थना की।

"पुत्र तीन प्रकार के हैं। शिष्य, पोषित और गर्भ पुत्र। उनमें तुम शिष्य हो, इसलिये पुत्र हो। मैं तुम्हारे प्राण छोड़ देता हूँ।" कहते हुये गरुड़ राजा ने सर्पराज को जमीन पर छोड़ दिया।

सर्पराज नागलोक में गया। गरुड़ राज ने अपने लोक में जाकर गरुड़ों से कहा-"सर्पराज पण्ढरक से मैंने मैत्री कर ली है। परन्तु में यह जानना चाहता हूँ कि उसके मेरे प्रति क्या भाव है।" यह कहकर

वह फिर नागलोक में गया और उसने अपने पंखों के फड़फड़ाहट से प्रभञ्जन तैयार कर दिया। तुरन्त, सर्पराज, पत्थर और रेत निगलकर, पूँछ को छुपाकर फुँफकारने लगा। तब गरुड़ राजा ने उसके पास जाकर आश्चर्य से कहा-"यह क्या सर्पराज! हमने तो सन्धि कर ली थी न? फिर मुझे मारने के लिए क्यों तैयार हो रहे हो?"

तब सर्पराज ने कहा-"मित्र! विवेकी को किसी का विश्वास नहीं करना चाहिये और फिर तुम तो कल तक शत्रु ही थे। कैसे विश्वास करें?" गरुड़ राजा ने कहा।

"तुम मेरा पाठ ही मुझे सिखा रहे हो। चलो, उस ढोङ्गी, चोर सन्यासी को देखकर जायें।

दोनों मिलकर करम्बिय की पर्णशाला में गये। सर्पराज ने करम्बिय को देखकर कहा-"तुझे बड़ा मुनि जानकर मैने तुझे रहस्य बताया और तूने गरुड़ राजा को बता दिया। तूने विश्वासघात क्यों किया?"

"मैंने अनजाने में वह काम नहीं किया है। यद्यपि तुम दोनों मेरे मित्र हो, पर गरुड़ राजा पर मुझे अधिक अभिमान है। इसलिये मैने तेरा रहस्य गरुड़ राजा को बता दिया।" करम्बिय ने कहा।

"छी! नीच कहीं का! सब कुछ छोड़कर, यदि पक्षपात की भावना, शत्रु-मित्र का भेद न गया, तो क्या पाया? तुम भी कोई मुनि हो! तुम क्योंकि संसार को धोखा दे रहे हो, इसलिये तुम्हारे सिर के सात टुकड़े हो जायें।" सर्पराज ने करम्बिय को शाप दिया।

तुरन्त करम्बिय के सिर के सात टुकड़े हो गये। उसके नीचे की भूमि फट गई। वह सीधे नरक को चला गया। सर्पराज और गरुड़ राजा अपने लोक चले गये।





[९]

[महामायावी के पास से महाशक्ति वाली बस्तुओं को पिङ्गल के लेते ही भलूक पर्वत की दुष्ट शक्तियों ने सिर उठाया। पद्मपाद ने पिङ्गल को, भल्लूककेतु के पास भेजा। वह उसको ले आया। तब पिशाच भल्लूककेतु के पास भागे मागे आये।]

भूतों को अपने पास दौड़कर आता देख पद्मवाद मुस्कराया। मगर भल्लूककेतु ने उन्हे देखना न चाहा। उसने एक तरफ मुड़कर, पिङ्गल को नमस्ते करते हुए कहा-"प्रभु, मैं इन क्षुद्र प्राणियों का नेता नहीं हो सकता। कृपा करके मुझे आप अपने साथ ले जाइये।"

पिङ्गल ने कोई जवाब न दिया। पद्मपाद ने भल्लूककेतु का कन्धा थपथपाते हुए कहा-"भल्लूककेतु, तेरे लिए इस पर्वत प्रान्त के राक्षसों पर शासन करते जीवन व्यापन करना श्रेयस्कर है, यह मेरा ख़याल है।"

"प्रभु! मैं अब यह जीवन नहीं चाहता।" कहते हुए भल्लूककेतु पद्मपाद के पैरों पे पड़ गया।

इस बीच, पिशाच, उनको चारों ओर से घेर कर चिल्लाने लगे- "भल्लूककेतु हमारा राजा है। होय होय।" उनके कर्ण कठोर शोर को सुन, पिङ्गल झुँझलाने



लगा। उसने कहा-"पद्मपाद, एक तरकीब सूझ रही है। अगर हमने यह काम किया, तो हमारी समस्या बड़ी आसानी से हल हो जायेगी, और साथ साथ भल्लूककेतु की भी।"

"वह क्या है?"

"भल्लूककेतु हमारी सेवा करता जीना चाहता है। इसीलिये वह इस पहाड़ी इलाके में नहीं रहना चाहता है। राक्षसों को छोड़ दिया, तो जाने क्या क्या क्रूर कार्य वे करें। यही अच्छा है कि इनका नामोनिशान मिटा दिया जाय। आओ....हम इन पर महामायावी की तलवार का उपयोग करें।" पिङ्गल ने कहा।

पिङ्गल के यह कहते ही, पिशाच हाहाकार करने लगे। उन सब ने एक स्वर में कहा-"महामान्त्रिकों! आप हमारा सर्वनाश न कीजिये। यदि हमारा राजा भल्लूककेतु हम लोगों का सरदार नहीं होना चाहता, तो हम अपना नेता अपने आप चुन लेंगे।"

"मुझे इस पर कोई आपत्ति नहीं है। तुम यह काम कर दिखाओ। तुम अपने नेता निर्वाचन समस्या का कैसे हल निकालते हो, यह देखने की मेरी भी इच्छा है।" पद्मपाद ने कहा।

"आप मनुष्यों में जैसे कि बलवान और शक्तिवान ही नेता बनता है, वैसे ही हम में भी होता है। ये शक्तियाँ किसमें अधिक हैं, हम देख लेंगे।" कहते कहते, पिशाच, खुलम खुल्ला मुका-मुक्की के लिए तैयार होने लगे।

"शाबाश, यह तरीका बहुत अच्छा है।" कह कर, पिङ्गल ने जोश के साथ तालियों पीटी।

राक्षसों में नेतृत्व के लिए धक्कम पेल शुरु हो गई। वह निरन्तर नया रङ्ग बदलती गई। आखिर युद्ध-सा शुरू हुआ। अगर कुछ ने शेर के रूप में बदले राक्षसों का मुकाबिला करने के लिए हाथी का रूप धारण किया तो कई उनका नाश करने के लिए, शेर की आकृति में परिवर्तित दो गये। फिर कुछ पिशाच देखते देखते नाग बन गये तो कुछ गरुड।



इस प्रकार के घोर युद्ध के बाद, जो बचे उन्होंने आखिर एक भूत को नेता चुना। पद्मपाद को नेता का यह निर्वाचन देख बड़ी खुशी हुई। उसने पिशाचों के नेता भूत को आशीर्वाद देते हुए कहा-"अब तुम स्वेच्छापूर्वक इस भल्लूक पर्वत में रह सकते हो। हम तुम्हे आश्वासन देते हैं कि न मैं, न पिङ्गल तुम पर हाथ उठायेंगे, अगर तुम सबने शान्तिपूर्वक जीवन व्यतीत किया, और मनुष्यों पर आक्रमण न किया। मेरी बात सच मानो। अपने इस निर्णय को मैं नहीं बदलूँगा।"

पिशाचों ने जयजयकार किया। वे अपने नेता को कन्धों पर उठाकर, पर्वतों पर चले गये। तब पद्मपाद ने पिङ्गल की ओर मुड़कर कहा- "पिङ्गल, अब हमने नाना कष्ट सहकर आवश्यक शक्तियों को पा लिया है। अब हमें कोई डर नहीं है। इस बारे में जो तुमने सहायता की है, उसे मैं कभी न भूल सकूँगा। मेरी यह इच्छा है कि तुम अपने पर जाने से पहिले मेरे पर कुछ दिन मेहमान बनकर रहो।"

पिङ्गल यह मान गया। पद्मपाद ने चुटकी भर मिट्टी लेकर कुछ मन्त्र पढ़कर, नीचे फेंक दी। तुरन्त, रेंकते रेंकते गधे रूपी पिशाच, भूमि को फोड़कर बाहर निकले।

पद्मपाद एक गधे पर चढ़कर बैठ गया। पिङ्गल दूसरे गधे पर चढ़ने जा रहा था कि भल्लूककेतु ने उसके आगे बढ़कर कहा-"प्रभू, आप मेरे कन्धों पर चढ़िये। मैं हमेशा आप का सेवक हूँ।"

पिङ्गल हँसता, भल्लूककेतु के कन्धों पर चढ़ गया। जिस गधे पर पद्मपाद बैठा था, वह आकाश में उड़ा। उसके साथ भल्लूककेतु भी उड़ा। बिना सवार के ही, दुसरा गधा भी उनके साथ उड़ने लगा। जङ्गल, पहाड, नदी, नाले पार करते सूर्यास्त के समय वे एक नगर के पास पहुँचे। पद्मपाद ने नीचे के खिलौनों से, नगर के मकानों को दिखाते हुए कहा-"उस पहाड़ के पास एक नाला बहता दिखाई देता है न? उसके पास तुम वह पेड़ों का झुरमुट देखो। उसमें जो सङ्गमरमर का चमकता घर दिखाई देता है, वह मेरा पितृ गृह है। क्योंकि मेरे दोनों भाई तोते झील में मर गये हैं, इसलिये में ही अब उसका मालिक हूँ। मेरे पिता का छोड़ा हुआ मन्त्र ग्रन्थ भी मेरा ही है।"

इतने में पद्मपाद का पिशाच गर्दभ धीमे धीमे उतर कर, घर की चारदिवारी के



ऊपर आकर खड़ा हो गया। भल्लूककेतु भी नीचे उतरा। चारदिवारी के बड़े फाटक पर दो नीग्रो गुलाम पहरा दे रहे थे। उन्होंने पद्मपाद को देखते ही, अपने हाथ में भाले ऊपर उठाकर कहा "जय पद्मपाद"। वे जयजयकार करने लगे।

पद्मपाद गधे से उतरकर आगे बढ़ा पिङ्गल भी भल्लूककेतु के कन्धों पर से उतरकर उसके पीछे चलने लगा। तरह तरह के वृक्षों को देखते हुए, जब घर की सीढ़ियों के पास सब पहुँचे तो उन्हें सफेद दाढ़ीवाला एक वृद्ध दिखाई दिया।

पद्मपाद ने उसे देखकर झुक कर प्रणान किया। उसने पीछे मुड़कर पिङ्गल से कहा-"ये ही मेरे पिता के गुरु हैं।" पिङ्गल ने भी उनको नमस्कार किया।

वृद्ध ने सबके आने तक वहीं प्रतीक्षा की। फिर उसने पिङ्गल की ओर अंगुली दिखाते हुए पूछा-"पद्मपाद! यह नवयुवक कौन है?" थोड़ी देर रुक कर उसने कहा-"कहीं, यह अवन्तीपुर का मछियारा तो नहीं है?"

पद्मपाद ने सिर हिलाकर बताया कि वह वही था। तुरन्त वृद्ध ने परमानन्द के साथ





कहा-"तो तुमने, महामायाबी की समाधि में रखी उन सब शक्तियों को पा लिया है।"

पद्मपाद ने कुछ न कहा। किन्तु उसने अपने हाथ की अंगूठी, हीरों से जड़ी तलवार और भूगोल को, बूढ़े को दिखाया। वृद्ध ने उन्हें कुछ देर तक गौर से देखने के बाद कहा-"पद्मवाद! अब तुम से बढ़कर इस संसार में कोई मान्त्रिक नहीं है। तुमने वह चीज पाई है, जो तुम्हारा पिता बहुत कोशिश करके भी न पा सका। इस प्रकार उसकी आत्मा को शान्ति पहुँचेगी।"

"मेरे पिता का छोड़ा हुआ मन्त्रग्रन्थ अब मेरा ही है न? पद्मपाद ने पूछा।"

वृद्ध ने मुस्कराकर कहा-"जब तुम्हारे पास संसार को जीत सकने वाली शक्तियाँ हैं, तब उस मन्त्रमन्थ में ऐसी कौन सी बात होगी, जिससे तुम्हारा फायदा होगा? जो शक्तियाँ तूने पाई हैं, उससे बढ़कर शक्तियाँ उसमें कोई नहीं हैं। क्योंकि जो वह खुद न कर सकता था, वह अपने लड़कों से करवाना चाहता था इसलिये तुम्हारे पिता ने बैसी शर्तें रखी थीं। महामायावी, तुम्हारे पिता का जानी दुश्मन था। अब तुमने उसको जीत लिया है।"

वृद्ध ने जब तक सब कुछ सुना न दिया, तब तक पद्मपाद अपने पिता का उद्देश्य न समझ सका। यानी, अपने जानी दुश्मन महामायाबी को निश्शक्त करने के लिए उन्होंने मेरा उपयोग किया था, उसने सोचा।

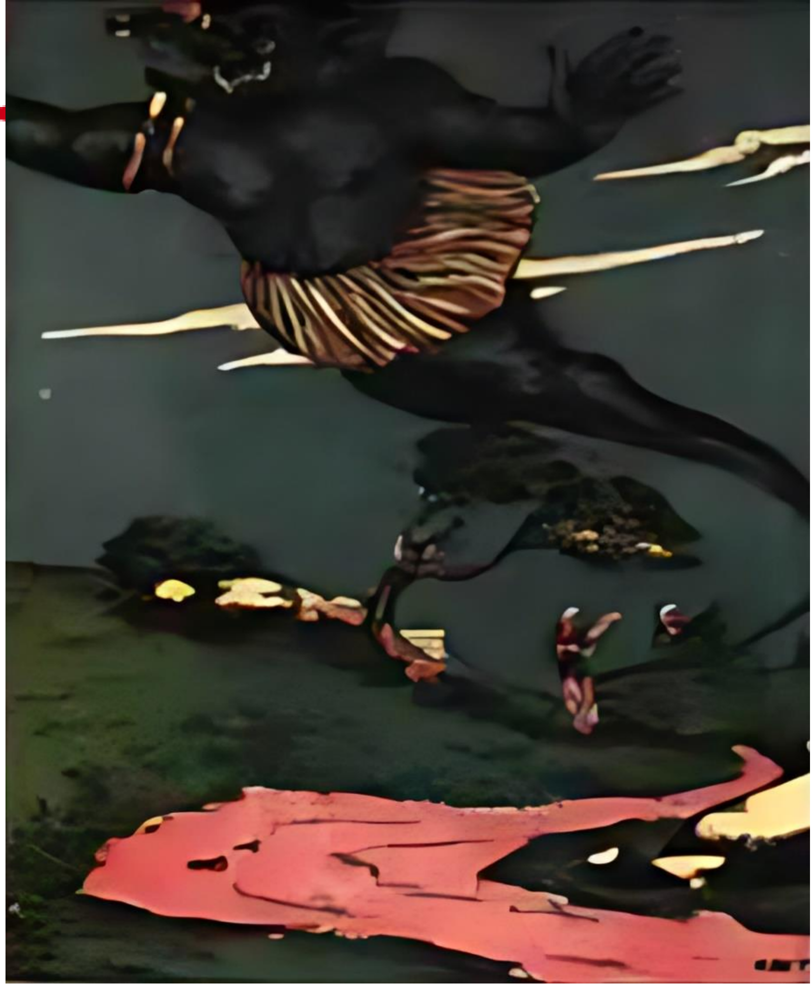
पद्मपाद इसी उलटफेर में था कि वृद्ध ने पिङ्गल का कन्धा सहलाते हुए कहा-"तू अवन्तीपुर का मछियारा है। यह भाग्य का कुछ ऐसा खेल था कि तुम पद्मपाद

को मिले और तुम दोनों मिलकर यह महान कार्य सम्पन्न कर सके। मैं इसलिये तुम्हारा अभिनन्दन करता हूँ।"

पिङ्गल, पद्मपाद का सप्ताह भर अतिथि रहा। वह वापसी यात्रा के लिए तैयार हो गया। पद्मपाद ने उसको कीमती पोशाकों के साथ बहुत-सा सोना, हीरे, मणि वगैरह, भेंट में दिये। पिङ्गल ने कृतज्ञतापूर्वक उन्हें स्वीकार किया।

जब पिङ्गल चारदिवारी पार करके जा रहा था तो पद्मपाद ने महामायावी की समाधि से लाये हुए वस्तुओं को दिखाते हुए पूछा- "पिङ्गल, उनमें से जो तुम चाहो, ले लो। मैं खुशी खुशी दे दूँगा।"

पिङ्गल इसके लिए न माना। उसने मुस्कराते हुए कहा-"पद्मपाद! ये महान शक्तिवाली चीजें, मुझ मछियारे की अपेक्षा, तुम्हारे जैसे मन्त्रवेत्ता के हाथ में अधिक सफल होगी। अगर तुम बुरा न मानों तो तुम्हारे पास एक चीज़ है, जो मैं चाहता हूँ।"



वह क्या है, निस्सन्देह माँगो।" पद्मपाद ने कहा।

"तुम्हारे पास जादूवाली एक थैली है न! बिना पकाये ही, उसमें सब प्रकार की खाने की चीजें मिलती हैं। अगर ऐसी कोई चीज़ मेरे हाथ में रही, तो मेरी बूढ़ी माँ को चूल्हा जलाने की तकलीफ न होगी। वह बड़ी खुश होगी।"

पद्मपादने, पिङ्गल की इच्छा के अनुसार वह थैली उसे दे दी। फिर पिङ्गल वृद्ध मन्त्रवेता, और पद्मपाद से आज्ञा लेकर, भालुक्केतु के कन्धों पर चढ़कर आकाश मार्ग से निकल पड़ा।

भल्लूककेतु, मेघावृत आकाश में उड़ता, ठीक कड़ी दुपहरी में, अवन्ती नगर के पास पहुँचा। उस नगर के बाहर अपनी झोंपड़ी को देखकर वह चौंका। उसने भल्लूककेतु का कन्धा थपथपाते हुए कहा-"भल्लूक, अब तुम बिना आगे उड़े, ठीक यहाँ उतरो, जहाँ पेड़ दिखाई दे रहे हैं।"

भल्लूककेतु, पिङ्गल की आज्ञानुसार, अवन्तीनगर के बाहर, पेड़ों के झुरमुट के बीच उतरा। पिङ्गल ने उसके कन्धों पर से उतरकर नगर की ओर देखते हुए कहा-"भल्लूक, अगर मैं तुम्हें इस रूप में नगर में ले गया, तो बहुत सारी समस्यायें पैदा होगी। अब क्या किया जाय?"

पिङ्गल के भय का अर्थ समझकर भल्लूककेतु ने खूब जोर से हँसकर कहा-"प्रभु! तो आप अकेले ही नगर में जाइये। जब आपको मेरी सहायता की जरूरत हो तब यह मन्त्र पढ़िये। मैं तुरन्त आपके सामने हाजिर हो जाऊँगा।" बह पिङ्गल के कान में कोई मन्त्र बताकर, अदृश्य हो गया।

पिङ्गल, पद्मपाद की दी हुई भेंटों को ढोता अपने पर की ओर चला। जब थोड़ी देर बाद वह घर के पास पहुँचा तो उसे अपनी माँ दिखाई दी। यह सूखकर काँटा हो चुकी थी। उसने काँपती आवाज में कहा-"दाताओ, इस बुढ़िया को भी कुछ देते जाइये। भूख के मारे मरी जा रही हूँ।" वह बिचारी हाथ पसारे बैठी थी। पिङ्गल ने यह देखा।

पिङ्गल पर बिजली-सी गिरी। उसने अपने दुख को काबू में करते हुए कहा-"माँ! तुम पर यह नौबत कैसे आई?" यह यह कहता माँ की ओर दौड़ा।

(अभी और है)





मछियारे का भाग्य

खलीफा ने पूछा ही था कि मछुआरा काँपता काँपता कुछ गुनगुनाने लगा।

"पीने के लिए थोड़ा पानी दे सकोगे?" खलीफा ने पूछा।

"तुम पागल हो या अन्धे? इस टीले के पीछे ही तो टिग्रिस बह रही है।" मछियारे ने कहा। खलीफा ने घोड़े पर सवार होकर टीले की परिक्रमा की। वह जान गया कि सचमुच वहाँ नदी थी। उसने घोड़े को पानी पिलाया, खुद पिया। वापिस आकर उसने मछियारे से पूछा-"भाई, तुम यहाँ क्या कर रहे हो? तुम्हारा पेशा क्या है?"

"यह सवाल बिल्कुल बेअक्ली का है। मैंने शरीर पर जाल लपेट रखा है। क्या तुम इससे अन्दाज नहीं लगा सकते कि मेरा पेशा क्या है?" मछियारे ने पूछा।

"ओहो, तो तुम मछियारे हो। तुम्हारे कपड़े कहाँ है?" खलीफा ने पूछा।

उसके यह प्रश्न पूछने पर, मछियारे को सन्देह हुआ कि उसी ने उसके कपड़े ले लिए होंगे। एक कदम आगे कूदकर उसने झट घोड़े का लगाम पकड़ लिया। "तुम मजाक फिर करना, पहले मेरे कपड़े वापिस कर दो।" मछियारा जोर से चिल्लाया।

"ख़ुदा की कसम! मुझे तेरे कपड़ों के बारे में कुछ नहीं मालूम है। मैं तुम्हारी बातें समझ नहीं पा रहा हूँ।" खलीफा ने कहा।

खलीफा का छोटा मुख था, और बढ़े गाल। उन्हें देख, मछियारे ने सोचा कि.. वह कोई शहनाई बजानेवाला होगा।

"अरे, बाजा बजानेवाले, अगर तूने मेरे कपड़े न दिये, तो मैं मोटे डण्डे से तेरी मरम्मत कर दूँगा। खबरदार! मछियारे ने कहा।

श्री रामलाल



उसका डण्डा देखकर खलीफा घबराया। उसने अपना मखमल का अङ्गरखा निकाल कर मछियारे को देते हुये कहा-"तुम

अपने कपड़ों के बदले इन्हे ले लो।"

"मेरे कपड़े इनसे दस गुने अधिक कीमती थे। फिर ये इतने लम्बे क्यों हैं?" कहते हुये उसने अपना मछली काटनेवाला चाकू निकाला, और अङ्गरखे को घुटने तक काट दिया, और उसे पहन लिया।

"देखो भाई, शहनाई बजाकर तुम रोज कितना कमाते हो?" उसने खलीफा से पूछा।

"दस दीनारें।" खलीफा ने जवाब दिया।

"बस इतना ही! में भी रोज दस दीनारें कमाता हूँ। मुझसे मछली पकड़ना क्या सीखोगे! तुम्हें कमाई का अच्छा रास्ता दिखाऊँगा। अगर तेरे मालिक ने कुछ चूँ चा की, तो इस लट्ठ से उसका सिर तोड़ दूँगा।" मछियारे ने खलीफा से कहा।

"हाँ, मुझे यह पसन्द है।" खलीफा ने कहा।

"....तो आ, उस गधे पर से उतर। अभी काम शुरू किया जाय।" मछियारे ने कहा।

खलीफा ने अपना पोड़ा एक पेड़ से बाँधा। मछियारे के साथ नदी के पास गया।

"यह देखो, इस जाल को इस तरह पकड़ो। इस तरह इसे हाथ पर आने दो, फिर इसे पानी में डालो।" मछियारे ने खलीफा को जाल फेंकना सिखाया। खलीफा ने पूरा जोर लगाकर जाल फेंका, फिर एक क्षण रुककर, जाल खींचने लगा। क्योंकि

वह बहुत भारी था, उसने मछियारे की मदद माँगी।

"तुम भी अच्छे धूर्त हो। मैंने अपने कपड़ों के बदले, तेरा पुराना चीथड़ा-सा अङ्गरखा तो ले लिया, खैर, अगर अब तूने मेरा जाल खराब कर दिया तो तेरा गधा ले लूँगा और तुम्हारी पीठ सीधी कर दूँगा।" मछियारे ने गुस्से से कहा।

जैसे तैसे, दोनों ने मिलकर जाल किनारे तक खींचा। उसमें तरह तरह की मछलियाँ थी। अनेक रङ्ग की।

"कोई बात नहीं। मैं तुझे अच्छा मछियारा बना दूँगा। तू बाजार जाकर तुरन्त दो टोकरे ले आ। इन मछलियों को टोकरों में रखकर उन्हें गधे पर ढोकर, बाजार ले जायेंगे। वहाँ जाकर तेरा काम बस इतना ही है... तराजू पकड़ना और पैसे वसूल करना। उठ, उठ, देरी न कर।" मछियारे ने कहा।

"अच्छा, जी हुजूर!" कहता खलीफा घोड़े पर सवार होकर निकल पड़ा। वह अपनी हँसी काबू में न रख सका।

जब वह वापिस आया तो वज़ीर वगैरह, दरबारी उत्कण्ठापूर्वक उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे।



"लगता है हुजूर को कहीं कोई बाग़ मिल गया। वहीं खूब आराम करके आये हैं।" जाफर ने कहा।

खलीफा ने अट्टहास करके, जो कुछ गुजरा था, कह सुनाया। उसे एक मजाक सूझी। उसने दरबारियों की ओर मुड़कर कहा "नदी किनारे से जो जितनी मछलियाँ लायेगा में उसे उतनी दीनारें दूँगा।"

तुरन्त, खलीफा के दरबारी टीले की तरफ जल्दी जल्दी दौड़े। वे मछियारे खलीफा से लड़-झगड़कर दोनों हाथों में मछलियाँ पकड़कर वापिस जाने लगे।

"जरूर इन मछलियों में कोई न कोई बात है! आश्चर्यचकित हो मछियारे ने सोचा। यह सोचकर कि यदि उसने देरी की तो उसके पास एक भी मछली न रहेगी, वह दोनों हाथों में एक एक मछली लेकर नदी में कूद पड़ा।

इस बीच खलीफा के सैनिक, बाकी मछलियों को लेकर खलीफा के पास गये। एक नीग्रो गुलाम सब के बाद नदी किनारे पहुँच सका। उसने नदी में खड़े मछियारे के हाथ में मछलियाँ देखकर कहा-" अरे मछियारे, एक बार इधर तो आ।"

"जा, वे जा चोर कहीं का।" मछियारे ने नीग्रो गुलाम को फटकार बताई।

नीग्रो गुलाम ने पानी के पास आकर कहा-"अगर तूने मुझे मछलियाँ दी तो तुझे मैं अच्छा इनाम दूँगा।" तब भी मछियारे ने उसकी न सुनी। नीग्रो ने अपने हाथ का भाला उस पर फेंकना चाहा। तब मछियारे ने कहा- "मैं इन कमवख्त मछलियों के लिए नहीं मरना चाहता हूँ।" उसने अपने हाथ में रखी मछलियों को किनारे पर फेंक दिया।

नीग्रो ने उन्हें उठाकर अपने रुमाल में बाँध



लिया। उसे इनाम देने के लिए उसने अपनी जेबें टटोली। पर जेब में कानी कौड़ी भी न थी।

"अरे भाई, आज तुम्हारी किस्मत अच्छी नहीं है। कल सकीफा के महल में आकर मेरे बारे में पूछना। मेरा नाम सण्डाल है। मैं तुम्हारी आवभगत करूँगा, और अच्छा इनाम भी दूँगा।" नीग्रो गुलाम पोड़े पर सवार होकर चला गया।

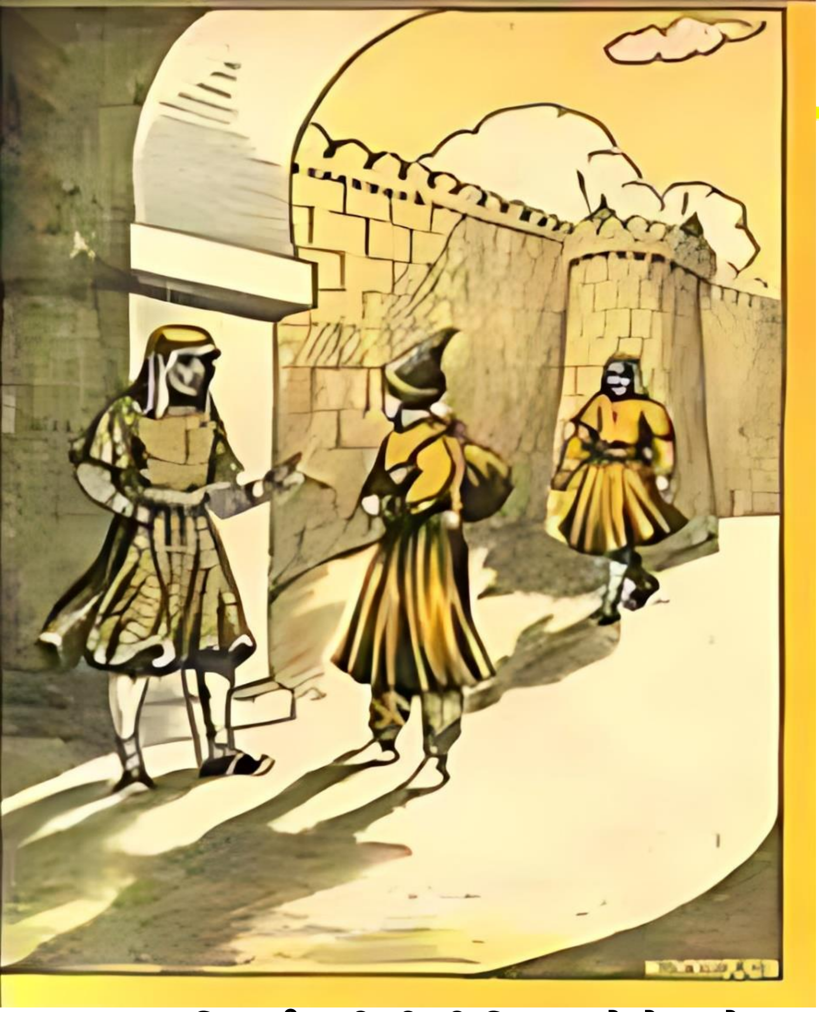
"आज भी क्या खराब दिन है।" यह सोचता सोचता, वह जाल सिर पर रखकर घर की ओर चला।

जब टिग्रिस नदी के किनारे यह नाटक हो रहा था, तब खलीफा के अन्तःपुर में भी एक नाटक चल रहा था। वह बड़ा भयङ्कर था।

खलीफा के दरबारियों के साथ शिकार खेलने के लिए जाने के बाद, जुवेदा ने एक दावत दी, उसमें कुतल कुलुब को भी बुलाया। उसने उसके प्रति आदर-सम्मान का प्रदर्शन किया। उसके मनोरञ्जन के लिए गाना गवाया। फिर कुछ मिठाइयाँ

मँगाकर उसने कुतल कुलुब को खाने के लिए कहा। उस मासूम स्त्री ने मुख में





मिठाई रखी ही थी कि वह बेहोश हो गई। क्योंकि उन मिठाइयों में जुबेदा ने कोई जहर मिला दिया था।

तुरन्त जुबेदा की नौकरानियों ने कुतल कुलुब को एक सन्दूक में बन्द करके ताला लगा दिया। फिर उसने यह घोषणा करवाई कि भोजन करते करते हृदय की धड़कन के बन्द हो जाने के कारण कुतल कुलुब की मृत्यु हो गयी। उसको तभी गाड़ दिया गया और उसकी कब्र भी चिन दी गई। उसने सचमुच अपने बगीचे में एक जगह सङ्गमरमर की मजार भी बनवा दी।

पर कुतल कुलुब जुवेदा के कमरे में, एक सन्दूक में बन्द थी।

खलीफा के वापस आते आते मजार भी पूरी तरह बना दी गई। जब उनको मालूम हुआ कि उनकी प्यारी स्त्री मर गयी थी, तो उनके दुःख का ठिकाना न रहा। जुबेदा की बनाई हुई मजार पर एक घण्टा बैठकर वे लगातार आँसू बहाते रहे।

जुबेदा की चाल चल गयी। अगले दिन उसने एक गुलाम को बुलाकर कहा-"अरे तू इस सन्दूक को बाजार ले जाकर इसे नीलाम करवा दे। यह किसी से न कहना कि इसमें क्या है। सन्दूक के बेचने के बाद, जो पैसा मिले, उसे गरीब भिखारियों में बाँट देना।"

मछियारा सवेरे उठते ही इनाम पाने के लिए, सण्डाल से मिलने राजमहल की ओर चला। मुख्य द्वार के पास ही उसे नीग्रो दिखाई दिया। परन्तु नीग्रो ने इनाम देने के लिए जेब में हाथ डाला, तो उस तरफ से बजीर जाफर गुजरा। नीग्रो को जाफर से बहुत देर बातचीत करता देख, मछियारा जल्दी करने लगा।

जाफर ने मछियारे को देखकर पूछा-"यह कौन है?"

"कल हम इसी की मछलियाँ ही उठाकर लाये थे।" नीग्रो ने जाफर से मछियारे का विस्तार पूर्वक वृत्तान्त सुनाया।

"यह बात है, यह ठीक समय पर आया है। हुजूर इस वक्त बहुत ग़मगीन हैं। अगर इसे अन्दर ले गये, तो कम से कम उनका मन बहलाव ही होगा। मैं उनसे कहकर आता हूँ। तब तक तुम इसे जाने मत देना।" जाफर ने खलीफा के पास जाकर तुरन्त मछियारे के बारे में कहा।

यह सुनते ही खलीफा में कुछ जोश-सा आया। "हाँ, हम और वह हिस्सेदार हैं। देखें, अल्लाह हम से उसे क्या दिलवाता है।" खलीफा ने फिर वज़ीर को हुकुम दिया कि कागज के टुकड़ों पर शून्य से लेकर हज़ार तक, छोटी नौकरी से सेकर, खलीफा के पद तक, कोड़े से फाँसी तक, तरह तरह की सजाये स्पष्ट रूप से लिखे।

यह काम खतम होने के बाद, वजीर सात परकोटे पार करके मछियारे



को खलीफा के पास ले गया। वहाँ का बाताबरण देखकर, मछियारे की अक्ल जाती रही। खलीफा के कमरे में प्रवेश करते समय जाफर ने उससे कहा-"अब, तुझे हुजूर के सामने ले आ रहा हूँ। खबरदार!" पर महियारे की तो अक्ल ही मारी गयी थी, यह वजीर की बात न समझ सका। परन्तु खलीफा को देखते ही उसकी सारी घबराहट यकायक काफूर हो गयी।

"अरे शहनाई बजानेवाले! तू भी यहीं है। तुझे टोकरे लाने के लिए भेजा, और तूने वापिस आने का नाम न लिया,

तू भी क्या आदमी है? तेरी बजह से, कल चोर हमारी पकड़ी हुई मछलियों को उठाकर ले गये। इतने से ही मेरा पिण्ड न छूटा, अब ये दुष्ट मुझे यहाँ पकड़कर लाए हैं। खैर, तुझे इस जेल में कौन लाया है?" खलीफा से मछियारा यों उत्साहपूर्वक पूछताछ करने लगा।

खलीफा ने अपने लिखवाये कागजों को सामने रखते हुए कहा-"इसमें से एक को चुन लो।"

"अरे, कल ही तो मछली पकड़ना सीखा था, और अभी ही ज्योतिष के झञ्झट में पड़ गये? क्या तुम जमकर कोई भी काम नहीं कर सकते?" मछियारा ने खलीफा को डाँट बताई।

"अरे, मुख बन्द कर, हुजूर के कहे मुताबिक एक कागज़ उठा!" जाफर ने मछियारे को धमकाया। मछियारे ने कागज उठाया। उसमें "सौ कोड़े" लिखा हुआ था।

फौरन सैनिकों ने उसे पकड़कर सौ कोड़े लगाये।

"इनाम के लिए आये हुए आदमी का कोड़े लाकर जाना अच्छा नहीं। उसे



फिर एक बार अपना भाग्य आजमाने दीजिये।" जाफर ने कहा।

मछियारे से एक और कागज उठाने के लिए कहा गया। उस पर "शून्य" लिखा था।

"इसका भाग्य भी इसके जैसा ही है। यूँ ही तीसरी बार भी उसे उठाने दीजिये। देखें, क्या होता है?" जाफर ने सुझाव दिया।

मछियारे के उठाये हुए तीसरे कागज़ पर लिखा था, "एक दीनार।" उसे एक दीनार दे दी गयी।

"क्या! सौ कोड़ों के लिए एक दीनार! आप सब भी इस अन्याय का फल भुगतेंगे।" मछियारे ने कहा।

यह सुन, खलीफा ठठा मारकर हँसा। जाफर उसका हाथ पकड़कर बाहर ले गया। यहाँ नीग्रो ने हँसते हँसते पूछा-"खलीफा ने जो तुसे इनाम दिया है; उसमें से आधा क्या मुझे नहीं दोगे?"

"क्यों नहीं दूँगा? पचास कोड़े और दीनार ले ले।" मछियारे ने खलीफा की दी हुई दीनार को उसपर फेंकते हुए झुञ्झलाकर कहा।





सन्दूक के पास एक बूढ़ा खड़ा होकर कह रहा था-"सज्जनों ! इस सन्दूक में क्या है, किसी को नहीं मालूम है। परन्तु यह सन्दूक जुबेदा बेगम के महल से आया है। इसको पहले पहल जो खरीदने के लिए तैयार हैं, वे सामने आयें।"

एक व्यापारी ने आकर कहा-"यह तो कोई फायदेवाली चीज नहीं मालूम होती। फिर भी मैं बीस दीनारें दूँगा।"

"पचास" तुरन्त एक और ने कहा।

"सौ" एक और चिल्लाया।

"यदि कोई और है, जो इससे अधिक देना चाहते हों, तो सामने आयें, नहीं तो सौ दीनार पर इसे उठा दूँगा।" नीलाम करने वाले ने कहा।

मछियारे ने जोर से कहा-"एक सौ एक।" बाकी व्यापारी उसे देखकर हँसे। क्योंकि किसी ने उससे अधिक न बोला था। इसलिए वह सन्दूक मछियारे को दे दिया गया। उसने अपने पास की सारी दीनारें, जुबेदा के गुलाम को दे दी। सन्दूक कन्धे पर रख, गिरता पड़ता, वह घर पहुँचा।

नीग्रो को मछियारे पर दया आयी। उसने सैनिकों से मछियारे को बुलाकर कहा-"यह ले तेरी दीनार, और जो इनाम मैंने देने का वादा किया था, वह भी लेते जा, ये हो सौ दीनारें। इन्हें ले जाओ, आराम से जिओ।"

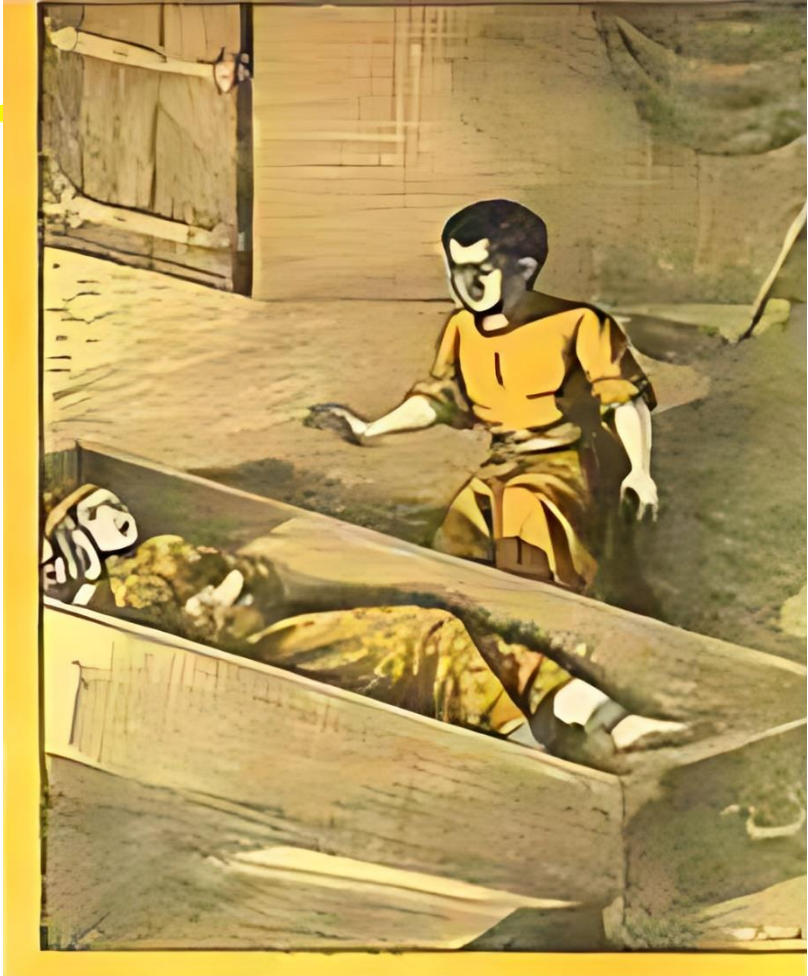
सोना देखकर, मछियारा अपने सारे कष्ट भूल गया। हवाई किले बनाता बनाता वह थोड़ी देर में, बड़े बाजार में पहुँचा। वहाँ उसे एक जगह भीड़ दिखाई दी। भीड़ को चीरता हुआ वहाँ गया। बीचों बीच, उसने एक सन्दूक पर एक गुलाम को बैठा पाया।"

उस सन्दूक में क्या था, मछियारे ने जानना चाहा। उसने उसे खोलने की बहुत कोशिश की, परन्तु वह ताला न खोल सका। "छी....छी, इतना पैसा फेंककर ऐसा सन्दुक खरीदा, जो खोला भी नहीं जा सकता है।" उसने सोचा। आखिर वह थक गया और उसी सन्दूक पर सो गया।

यह अभी एक घण्टा ही सोया था कि उसको सन्दूक में कुछ हिलता मालूम हुआ और उसकी नींद टूट गयी। यह घवराया सन्दूक पर से दूर कूदा। "इसमें कोई भूत है। अच्छा है कि यह नहीं खुला। नहीं तो वे भूत बाहर आ जाते और मेरी बोटी बोटी काटकर मुझे खा जाते।" उसने सोचा।

फिर सन्दूक में हिलना डुलना और भी बढ़ गया। उसने दिया जलाना चाहा, पर बहुत ढूँढने पर भी वह न मिला। मछियारा दरवाजा खोलकर चिल्लाया-"बचाओ, बचाओ!"

उसका चिल्लाना सुन आस पड़ोस के लोगों की नींद टूटी। उन्होंने दरवाजे मैं से, खिड़की में से झाँककर पूछा-"क्यों? क्या बात है?"



"भूत.... पिशाच! आपकी मेहरबानी, जरा दिया और हथौड़ा दीजिये। मेरे पर में भूत आ गये हैं।"

यह सुन सब हँसे। एक ने दिया, और एक और ने हथौड़ा उसे दिया। मछियारा उन्हें लेकर फिर अपने पर में चला गया। हथौड़े की चोट से सन्दूक का ताला टूट गया। दिये की रोशनी में उसने देखा कि उस सन्दूक में एक बहुत ही सुन्दर स्त्री है। उसे तभी तभी थोड़ी थोड़ी होश आ रही थी। अङ्गड़ाइयाँ लेती हुई धीमे धीमे आँखें खोल रही थी।

"अरे बाप रे बाप, तुम कौन हो?" मछियारे ने सन्दूक पकड़कर धीमे से पूछा।

उसने आँखें खोलकर पूछा-"तुम कौन हो? मैं कहाँ हूँ?"

"भाई, मैं मछियारा हूँ। मेरा नाम खलीफा है। तुम मेरे ही घर में हो।" उसने कहा।

"क्या यह खलीफा हरून अल रशीद का महल नहीं है?" उस स्त्री ने पूछा।

"बाह बाह तेरे पर, सिवाय मेरे किसी और का कोई हक नहीं है। आज ही मैंने नीलामी में तुझे एक सौ एक दीनारें देकर खरीदा है। खुदा की शुक्र से मेरा भाग भी जग गया है।" मछियारे ने कहा।

कुतल कुलुब उसकी बकवास न समझ सकी। उसे भूख सताने लगी। "खाने के लिए कुछ है?" उसने पूछा।

"अरे, ख़ुदा की कसम, घर में खाने के लिए कुछ नहीं है। में ही दो तीन दिनों से फाका कर रहा हूँ।" मछियारे ने कहा।

"खैर, पैसा तो है?" उसने पूछा।

"ख़ुदा इस सन्दूक की हिफाजत करे। जो कुछ मेरे पास था, मैंने इस पर खर्च दिया।" उसने कहा।



"मुझे बड़ी भूख लग रही है, किसी के घर जाकर कुछ खाने को ला।" उस स्त्री ने कहा।

मछियारा गली में जाकर चिल्लाने लगा-"देनेवाले दाताओं, पेट मूख से जला जा रहा है। कुछ खाने को दीजिये।"

यह सुन फिर सब की नींद टूटी। उसे कोसते कोसते लोगों ने जो कुछ घर में खाने को था, उसे दे दिया। वह उसे ले जाकर कुतल कुलुब के पास ले गया।

"पहले मुझे थोड़ा पानी दो, गला सूखा जा रहा है।" कुतल कुलुब ने कहा।

खाली सुराई लेकर मछियारा गली में भागा। फिर उसने अहोस पड़ोस के लोगों को जगाया। उसे बुरा भला कहकर, उन्होंने पानी भी दिया।

कुतल कुलुब ने पेट भर खाकर अपनी कहानी मछियारे को सुनायी। आखिर उसने कहा-"कुछ भी हो, तेरी किस्मत अच्छी है। अगर खलीफा को मालूम हो गया कि तूने मेरी जान बचायी है, तो वह तुझे सोने से तुलवायेगा।



"उसकी बात मुझे न बता। मैं सोचता था कि खलीफा और कोई होगा। पर वह तो यही शहनाई बजानेवाला निकला, जिसने मुझसे मछली पकड़ना सीखा था। चमड़ी जायेगी पर वह दमड़ी न देगा। निरा कञ्जूस है।" मछियारे ने कहा।

उसकी बात सुनकर कुतल कुतुब ने कहा-"जब तक तुम ये उटपटाङ्ग बातें नहीं छोड़ोगे तब तक नहीं सुधरोगे। अगर जिन्दगी बदलनी है, तो पहले तुम खुद बदलो। तुम्हारे भी अच्छे दिन आनेवाले हैं। अच्छी तरह सोच लो।"

उसके यह कहने से मछियारे के मन में कुछ परिवर्तन-सा हुआ। उसे ऐसा लगा, जैसे किसी ने उसकी जञ्जीरें खोल दी हो। जिन्दगी में पहली बार यह दुनियाँ जैसी थी, बैसी उसे देखने लगा।

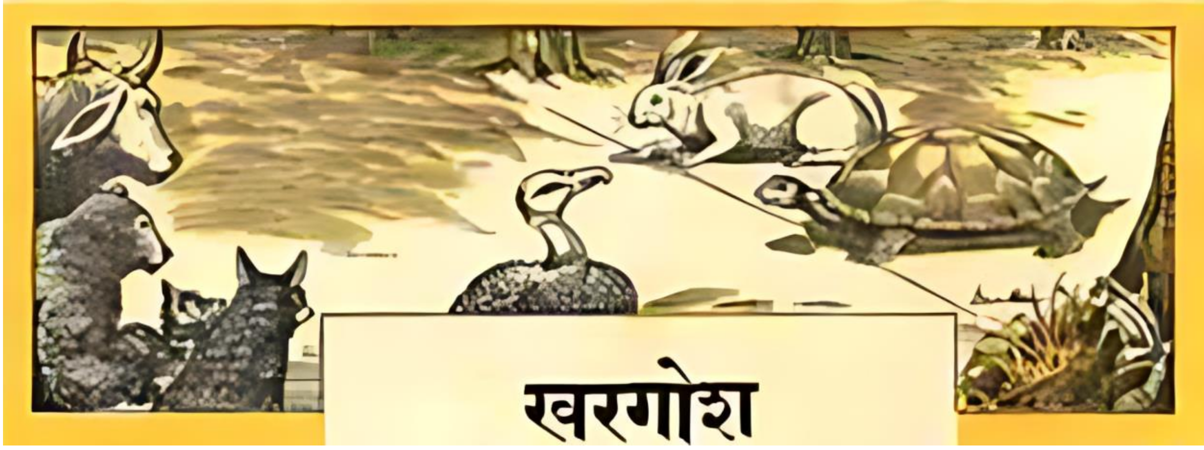
सवेरे होते ही, कुतल कुलुब ने, इबन अल फिर्नास के नाम, एक चिट्ठी लिखकर, मछियारे के द्वारा भेजी। जौहरी ने उसकी चिट्ठी पढ़कर पूछा-"तुम्हारा घर कहाँ है?" मछियारा उसको अपने घर ले गया।

जौहरी ने मछियारे को हज़ार दीनारें दी। फिर खलीफा के पास यह कहने गया कि कुतल कुलुब जीवित थी।

यह सुन खलीफा बहुत खुश हुआ। उसने इस बार मछियारे खलीफा को बुलाकर, पचास हज़ार दीनारें, घोड़े, दास दासी आदि, दिये।

अब मछियारा खलीफा बड़े घरवाला हो गया। उसने एक बड़ा मकान खरीदा। एक बड़े घराने में शादी भी कर ली। यह खलीफा का आन्तरङ्गिक मित्र बन गया और आराम से जिन्दगी बसर करने लगा।





खरगोश

भेड़िये को मारने के और, लोमड़ी को कई बार तङ्ग करने के बाद, खरगोश, जो कोई मिलता, उसके सामने शेखियाँ मारता घमण्ड करता।

एक दिन, खरगोश कछुए से कह रहा था-"मैं वायु की गति से भाग सकता हूँ, इसीलिये मैं अपने प्राण कई बार बचा सका। अगर मैं भी तुझ जैसा सुस्त होता, तो जाने क्या होता।"

कछुए ने कहा-"तू क्या मेरे साथ होड़ कर सकता है। अगर तू बायु वेग से जा सकता है, तो मैं मन के वेग से भाग सकता हूँ।"

"अच्छा तो बाजी लगायें! आओ।" दोनों ने सोचा। गिद्ध को निर्णायक निश्चित कर, उन्होंने पाँच मील की दौड़ लगानी चाही।

"तू सीधे सड़क पर भाग। मैं जङ्गल के रास्ते, धूम-धाम कर आऊँगा और तब भी तुझे हरा दूँगा।" कछुए ने कहा।

एक दिन दौड़ के लिए निश्चित किया गया। जाने क्या हो, यह सोच कर सरगोश रोज सड़क पर भागने का अभ्यास किया करता। कछुआ अपने पर से न हिला। कछुए की पत्नी और तीन बड़े बच्चे थे। सब के सब कछुए की तरह ही थे। दौड़ के दिन, सवेरा होने से पहले कछुआ, उसकी पत्नी और लड़के सोकर उठे। कछुए की पत्नी जावर, पहिले मील के पत्थर पर जाकर बैठ गई। तीनों बच्चे रास्ते में अलग अलग जगह पर खड़े हो गये। कछुआ पाँचवें मील के पत्थर के पास पहुँचा।

दौड़ का समय हो गया। गिद्ध को लेकर खरगोश आया। उसने कछुए की

पत्नी से कहा-"भाई! तुम तो मुझ से पहले आ गई हो।"

दौड़ देखने और कई पशु भी आये। "एक..... दो....तीन !" गिद्ध ने जोर से कहा।

"तीन" गिद्ध के कहने की देर थी, खरगोश बाण की तरह दौड़ा।

"मुझे क्या जल्दी है? में घूम-फिर कर पहुँचूँगा।" यह कहती कए की पत्नी जङ्गल में घुसी और सीधे पर चली गई।

खरगोश, पहला मील खतम करने को था, कि उसे पास के झाड़ों से एक कछुआ आता दिखाई दिया। वह कछुए का लड़का था।

खरगोश हैरान रह गया। "अरे! तुम पहले चले आये!" उसने कहा।

"हाँ! आराम से चला आ रहा हूँ।" कहकर सड़क पार कर यह जङ्गल में घुसा, और वहाँ से सीधे पर पहुँचा।

खरगोश और तेजी से दौड़ा। परन्तु दूसरे मील पर उसे कछुआ दिखाई दिया। वह उससे आगे था।

तीसरे मील और चौथे मील पर भी यही हुआ। पाँचवीं मील पर झाड़ियों में छुरा खरगोश, गिद्ध को जाता देख बादर निकला और आसानी से गम्यस्थान पर पहुँच गया। प्रेक्षकों ने तालियों पीटी।

थोड़ी देर बाद, खरगोश हाँफता हाँफता, पसीना बहाता आया। प्रेक्षकों ने सीटी बजाकर उसका परिहास किया।

"दौड़ में, कछुए की जीत हुई। खरगोश हार गया। इस वजह बाजी, कछुए की रही।" गिद्ध ने कहा।

कछुआ अन्याय से जीता हुआ रुपया लेकर पर चला गया और खरगोश को मुँह की खानी पड़ी।





चीन देश के एक महानगर में एक दर्जी रहा करता था। उसका नाम था मुस्तफा। वह बहुत गरीब था। दिन भर मेहनत करता, पर इतना न कमा पाता कि बच्चों का अच्छी तरह पालन-पोषण कर सके।

मुस्तफा के लड़का का नाम था अलादीन। वह निरा आलसी था। उसका जीवन में कोई उद्देश्य न था। माँ-बाप का भी ख़याल न करता। वह सवेरे सवेरे घर से निकल जाता, आलसी साथियों को लेकर, शहर में आवारागर्दी करता।

अलादीन की, जब काम करने की उम्र आयी, तो उसका पिता उसको अपनी दुकान ले गया। उसने उसे सूई से सीना पिरोना सिखाया। पर उसको एक जगह बिठाकर उससे काम लेना, उसके बस में न था। पिता जरा आँख मूँदता तो वह बाहर खिसक जाता और शाम तक वापिस आने का नाम न लेता। मुस्तफा ने उसे पीट कर देखा, पर अलादीन तो चिकना घड़ा था। आखिर वह करता तो क्या करता? उसने अपने लड़के के बारे में, उम्मीद ही छोड़ दी। लड़के की फिक्र में ही मुस्तफा ने चारपाई पकड़ी और कुछ महीनों बाद वह गुजर गया।

पिता के मर जाने के बाद, अलादीन पर रहा सहा नियन्त्रण भी जाता रहा।



कुछ काम-धाम न करता। वह पन्द्रह वर्ष तक आवारागर्दी करता रहा।

उसकी माँ जानती थी कि वह दुकान पर काम न करेगा। इसलिए उसने दुकान बेच दी। सूत कात कर दो-चार पैसे कमाती, उसी से घर-बार चलाती। अलादीन की देख-भाल करती। अलादीन को इसकी भी परवाह न थी कि उसकी माँ उसके लिए खून-पसीना एक कर रही थी। अलादीन गली में साथियों के साथ खेल रहा था कि उस रास्ते से जाते जाते एक व्यक्ति ने उसे ध्यान से देखा।

वह व्यक्ति अफ्रीका के मोरोको देश से आया था। वह मूर था। वह बड़ा जादूगर भी था। उसने अलादीन को देखकर सोचा कि वह उसके काम आ सकेगा। जादूगर ने उसके दोस्तों से उसका नाम आदि भी जान लिया।

फिर उसने अलादीन के पास जाकर पूछा-"तुम मुस्तफा दर्जी के लड़के हो न!"

"जी हाँ, उनके गुजरे हुए बहुत दिन हो गये हैं।" अलादीन ने कहा।

यह सुनते ही जादूगर ने अलादीन को गले लगा लिया। उसके गाल चूमकर, वह जोर जोर से रोता आँसू बहाने लगा।

"क्यों रो रहे हैं आप? क्या आप मेरे पिताजी को जानते हैं?" अलादीन ने जादूगर से पूछा।

"अरे भाई, क्या पूछते हो? जब मैं यह जानूँ कि मेरा सगा भाई मर गया है, तो क्या मैं नहीं रोऊँगा? देश-परदेश घूम-घाम कर जब में घर पहुँचा तो तुम कहते हो कि वह गुजर गया है। पर तुम्हें देखते ही मैं जान गया कि तुम मेरे भाई के लड़के हो। तुम्हारे पिता की शादी से

पहले, यानि चालीस साल पहले ही, मैं देश छोड़कर चला गया था। पर तुझे देखते ही मुझे ऐसा लगा, जैसे मैं अपने भाई को देख रहा हूँ। तेरे सिवाय अब इस संसार में और कोई नहीं है। तुझे देखकर मैं यही सोचकर सन्तोष कर लूँगा कि मैंने भाई को देख लिया है।" कहकर जादूगर ने दस मुहरें अलादीन के हाथ में रखते हुए कहा-"ये अपनी माँ को देना। उनसे कहना कि मैं वापस आ गया हूँ और मैंने उनका हालचाल पूछा है। कहोगे न कल? मैं उनसे बातचीत करूँगा। मैं अपने भाई का पर देखकर खुश होऊँगा।"

जादूगर की दी हुई मुहरों को देखकर अलादीन को बड़ी खुशी हुई। वह प्रायः भोजन के समय पर भी पर न पहुँचता था, पर उस दिन पहले ही माँ के पास जाकर उसने कहा-"माँ, परदेश से चाचा वापिस आये हैं। कल तुम्हें देखने आयेंगे।"

"क्यों बेटा, क्या तुम्हारी अक्ल मारी गयी है? तेरे चाचा कहाँ है? तुम्हारे पिताजी के कोई भाई न था!" उसकी माँ ने कहा।



"माँ, तुम भी क्या कहती हो? वे मेरे चाचा ही है। उन्होंने मुझे पास बुलाकर दुलारा-पुचकारा भी था। जब मैंने बताया कि पिताजी मर गये थे, तो वे रोये भी थे। उन्होंने यह भी तुमसे कहने के लिए कहा था कि वे वापिस आ गये हैं।" अलादीन ने कहा।

अगले दिन सवेरे जादूगर, अलादीन को खोजता खोजता, गलियों में फिरने लगा। इधर उधर कुछ देर तक फिरने के बाद, एक जगह उसको अलादीन और उसके साथी दिखाई दिये। जादूगर ने

अलादीन को फिर पास बुलाकर, उसका चुम्बन कर, उसके हाथ में दो मुहरें रखकर उसने कहा-"इन्हें ले जाकर अपनी माँ को दो। जरूरी चीजों को खरीद कर भोजन तैयार करने के लिए कहो। कहना कि मैं शाम को खाने के लिए आऊँगा। घर का रास्ता तो दिखाओ।"

अलादीन ने उसको अपने घर का रास्ता दिखाया। उसने माता के पास जाकर कहा-"माँ, शाम को हमारे घर वे भोजन करने आ रहे हैं।" माँ, तुरन्त बाजार से खाने पीने की चीजें खरीदने गयी। उस गरीब के घर बर्तनों की भी कमी थी। उसने पड़ोस के घरों से बर्तन उधार लेकर, रसोई करनी शुरू की।

अन्धेरा हो गया। अलादीन की माँ ने उससे कहा-"बेटा! खाना तो बना दिया है। मालूम नहीं कि वे हमारे पर का रास्ता जानते हैं कि नहीं? क्या तुम जाकर उन्हें लिवा लाओगे?"

अलादीन बाहर जाने को था कि किसी ने घर का किवाड़ खटखटाया। जादूगर बहुत सारे फल, पेय आदि, कुछ पर लाद कर लाया था।



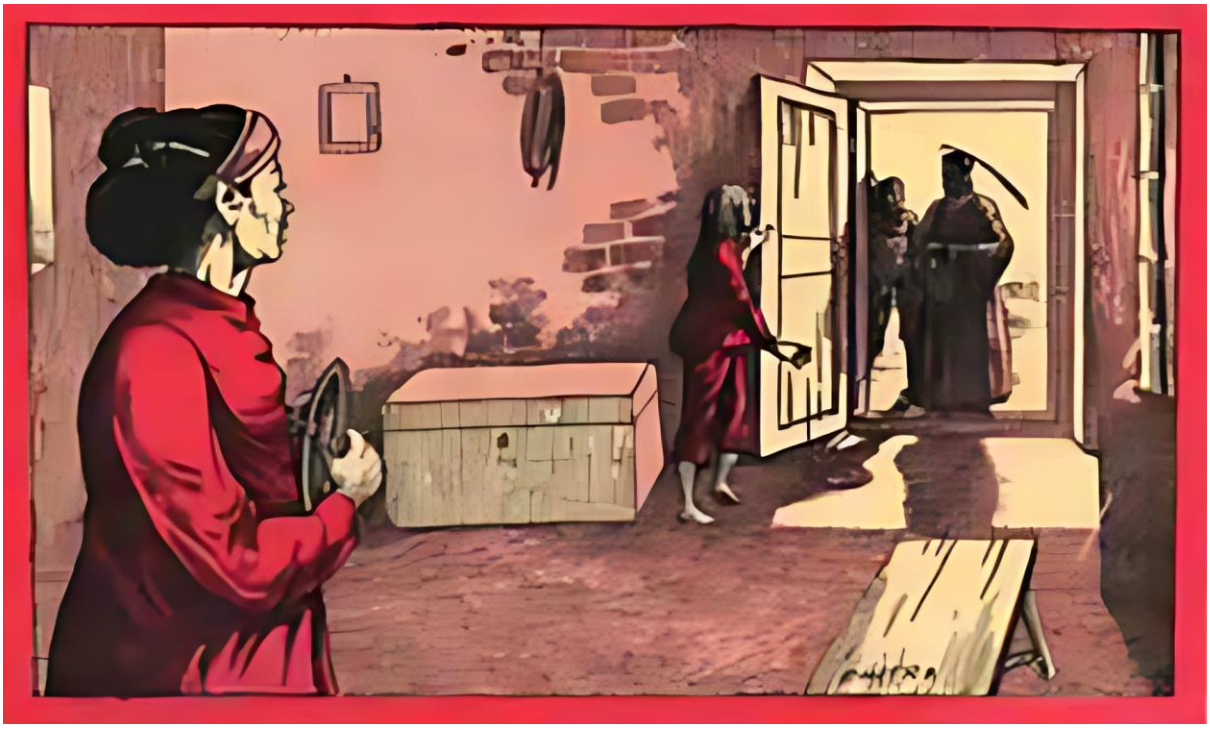
जादूगर ने कुली को पैसे देकर भेज दिया और उसने आलादीन की माँ से बातचीत शुरू की-"क्या, भाभी जी! आप बता सकेंगी कि हमारे भाई साहब कहाँ बैठा करते थे?"

अलादीन की माँ ने यह जगह दिखाई, जहाँ मुस्तफा बैठा करता था। तुरन्त जादूगर उस जगह घुटने टेक कर बैठ गया। भूमि को नमस्कार कर, आँसू बहाता कहने लगा-"अरे भाई, अफसोस कि तुम्हारे जीवित रहते में वापिस न आ सका। कितना अभागा हूँ!" वह रोने धोने लगा।

"तुम वहीं बैठो !" अलादीन की माँ ने कहा।

"नहीं, मैं यहाँ नहीं बैठूंगा। अगर आप बुरा न मानें तो सामने बैठूंगा। अगर इनके सामने बैठने की किस्मत न थी, तो कम से कम उनके बैठने की जगह के सामने बैठने की तो किस्मत है।" जादूगर ने कहा।

उसका रोना-चिल्लाना, व्यवहार आदि देखकर, अलादीन की माँ सचमुच यकीन करने लगी कि वह उसके पति का छोटा भाई ही था। आखिर उसने पूछा-





में मोरोको देश पहुँचा और वहीं तीस वर्ष से रह रहा हूँ। एक दिन अकेला बैठा कुछ सोच रहा था कि मुझे घर की, भाई की याद सताने लगी। मैंने उनको देखना चाहा। जाने क्या क्या ख़याल आने लगे। मुझे डर लगने लगा कि कहीं उन्हें देखे बिना ही न गुजर जाऊँ। मैंने तो काफी रुपया कमा लिया था। पर मैं घबराने लगा कि कहीं ऐसा न हो कि भाई गरीबी की मुसीबतें ही झेल रहे हो। फिर क्या था? घर छोड़कर चला आया।

रास्ते में मुझे क्या क्या मुसीबतें झेलनी पड़ीं, इसके बारे में अब क्या कहना! जैसे तैसे मैं इस शहर में पहुँच गया। गली में जाते जाते, अलादीन मुझे अपने साथियों के साथ खेलता दिखाई दिया। आप यकीन कीजिये या न कीजिये, उसे देखते ही मैंने पहचान लिया। मेरा हृदय खुशी के कारण उछलने लगा। परन्तु उसके यह कहने पर कि भाई मर गये थे, मुझे इतना दुःख हुआ कि कुछ पूछो नहीं। मैं अपने को काबू में न रख सका। शायद अलादीन ने आपको

"क्यों रो रहे हो भाई! रोओ मत। मरनेवालों के साथ मर तो सकते नहीं।" कहकर उसने जादूगर को ढाढ़स बँधाया।

जादूगर ने उससे कहा-"देखिये, भाभी! आप इस पर आश्चर्य न करें कि आपने भाई से शादी की, और उनके साथ इतने साल रहे, और मैं देखने भी न आया। इसका कारण यह था कि मुझे देश छोड़कर गये चालीस साल हो गये हैं। मैं मिश्र, भारत, अरेबिया, सीरिया आदि देशों में घूमा हूँ। कैरो नगर में बहुत दिन रहा हूँ। कैरो नगर जैसा शहर संसार में दूसरा और कोई नहीं है। आखिर

बताया ही होगा। मैंने यह सोचकर तसल्ली कर ली कि भाई गये तो गये कम से भाई की शक्ल वाला अलादीन तो है। उनकी शक्ल हुबहू भाई की शक्ल है।"

यह सब सुनते सुनते अलादीन की माँ की आँखें भी भर आई। यह देख, बातों का रुख बदलते हुये, जादूगर ने अलादीन से पूछा-"बेटा, अलादीन! तुमने क्या पेशा सीखा है? अपना और माँ का पालन-पोषण करने के लिए क्या करोगे?"

ये प्रश्न सुनते ही अलादीन ने अपना सिर झुका लिया। माँ की बात सुनकर तो वह और भी शर्मिन्दा हुआ।

"पूछी तो अलादीन की ही बात पूछी, क्यों भाई! उसे कुछ नहीं आता। इतना निकम्मा आदमी मैंने कहीं नहीं देखा है। आबारागर्दों के साथ दिन-रात खेलता रहता है। उसके पिता ने उसे सीना-पिरोना सिखाने की बहुत कोशिश की। पर क्या फायदा? इसी की वजह से वे बीमार भी हो गये। क्या बताऊँ? आठों पहर सूत कातती हूँ, पर दो टिकड़ भी नसीब नहीं और यह खाने के सिवाय घर आने का नाम



नहीं लेता। घर इसे शायद काटता-सा है। मैं भी देखती देखती हार गई हूँ। मैं उसकी परवरिश नहीं कर सकती। वह खुद ही अपना पेट भरे। मेरी भी उम्र हो गई है।" अलादीन की माँ ने कहा।

जादूगर ने अलादीन की ओर मुड़कर कहा-"बेटा! यह तो अच्छी बात नहीं है। तुम तो अपने बाप की तरह अच्छे अक्लमन्द हो, क्या तुम्हारे लिए ऐसा करना अच्छा है? कामकाजी होकर, तुझे माँ की देखभाल करनी चाहिये, न कि वह तेरी। काम करना चाहो तो कितने ही

तरह के काम हैं। तू बता तुझे क्या सीखने की मर्जी है, उसे सिखाना मेरे जिम्मे रहा। अगर तुम अपने पिता का दर्जी का पेशा नहीं करना चाहते हो तो कुछ और करो। मैं तुम्हारी हर तरह से मदद करने के लिए तैयार हूँ।"

इसका अलादीन ने कोई जवाब न दिया। जादूगर ने यह अन्दाज करके कि वह मेहनत नहीं करना चाहता है, कहा-"अगर तुम हाथ का हुनर बगैरह नहीं सीखना चाहते हो तो जाने दो। इसमें क्या बात है! तेरे लिए एक कपड़े की दुकान खोलूँगा। उसे रेशमी कपड़ों से भर दूँगा। मजे में व्यापार करना।"

यह सुन अलादीन का मुँह खिल-सा गया। अच्छी पोशाक पहन कर, तिजोरी के पास बैठकर वह अपने को व्यापारी कहलाना चाहता था। वह जादूगर को देखकर मुस्कराया और स्वीकृति सूचित करते उसने सिर हिलाया।

"तब क्या है! मैं तुझे कल बाज़ार ले जाऊँगा। बड़े बड़े व्यापारियों की सी पोशाकें खरीद दूँगा। फिर एक बढ़िया दुकान खुलवा दूँगा।" जादूगर ने कहा।

इस नये रिश्तेदार को ख़ुदा की तरह आया देखकर अलादीन की माँ फूली न समाई। उसने अलादीन से कहा-"देख, तुम्हारे चाचा तुम्हारे लिए क्या क्या कर कर रहे हैं। उनका नाम रखना। कम से कम, अब से अक्लमन्दी से रहना, उनका कहा सुनना।"

उसने फिर भोजन परोसा। तीनों ने सन्तोष से भोजन किया। इधर उधर की बातें चलती रहीं। जादूगर यह कह चला गया कि वह फिर वापिस आयेगा।

(अभी और है)





विचित्र शक्तियाँ

विक्रमार्क तो हार मानना जानता न था। शव को उतारकर, कन्धे पर डाल, वह फिर श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा-"राजा, अद्‌भुत शक्तियों को पाने के लिए कुछ आदमी, दुनियाँ भर के उल्टे-सीधे काम करते हैं, पर उनके कारण सुख तो मिलता ही नहीं है, जिसकी उम्मीद होती है, बल्कि अपकार भी होता है। गुणनिधि इसका अच्छा दृष्टान्त है। उसकी कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने कहानी सुनानी शुरू की।

यमुना नदी के किनारे, एक गाँव में गुणनिधि नाम का नौजवान रहा करता था। छुटपन से ही तत्वज्ञान पर उसका विशेष प्रेम था। इसलिए काशी में शिक्षा पूरी करके, वह घर वापिस न गया, परन्तु

बेताल कथाएँ

बड़े बड़े तत्वज्ञानियों के पास सांख्य दर्शन आदि पढ़ने लगा।

काशी में गुणनिधि का एक मित्र था। उसका नाम था जयवर्मा। जयवर्मा काशी का न था। वह किसी और जगह से आकर वहाँ रह रहा था। वह दिन भर इधर-उधर का व्यापार करके कुछ कमाता और जो कुछ कमाता, उसे जुए में उड़ा देता और रात को खाली हाथ पर पहुँचता। यह उसकी दिनचर्या थी।

यद्यपि दोनों में कोई समानता न थी, पर गुणनिधि और जयवर्मा अच्छे मित्र बन गये। वे दोनों एक ही घर में रहा करते थे। जयवर्मा ने कई बार अपने साथी को भी जुआ खेलने ले जाना चाहा। पर गुणनिधि को जुआ कतई पसन्द न था। और तो और उसने जयवर्मा से भी कहा-"तेरी यह बुरी आदत कैसे हो गई है? जो कुछ कमाता है, इस पर फेंक देता है। क्या फ़ायदा?"

"क्या धन शाश्वत है? आता है; जाता है! भाग्य को साथ करने में कितना आनन्द है। यह तू अनुभव से ही जान सकता है।" जयवर्मा कहा करता।



परन्तु यह भाग्य हमेशा उसके प्रतिकूल ही रहता। वह एक दिन भी जुए में जीत कर पर न लौटा। जैसे जैसे धन खोता जाता, वैसे वैसे जयवर्मा का यह व्यसन बढ़ता जाता।

आखिर उसने एक दिन गुणनिधि से कहा-"अगर तू भी एक बार मेरे साथ आया, तो हो सकता है कि मेरा भाग्य बदल जाए। क्योंकि तू मेरा हितैषी है। तुम जुआ न खेलना, मेरे साथ रहना। बस!" गुणनिधि न न कर सका। वह उसके साथ जुआ खेलने की जगह गया।

जयवर्मा ने हाथ में कुछ पैसा लेकर गुणनिधि से पूछा-"हमको किस पर बाजी लगाने के लिए कहते हो? जिसे तुम चाहो उसे बताओ।" गुणनिधि ने जो मन में आया वह कह दिया। जयवर्मा ने उसी पर बाजी लगायी। जब पासा डाला गया तो गुणनिधि ने जो कुछ कहा था, यह ठीक निकला। जयवर्मा जीत गया।

"अब एक और बताओ।" उसने कहा। अनायास गुणनिधि के मुख से एक संख्या निकल पड़ी। इस बार भी जयवर्मा जीता। वह आधी रात तक जुआ खेलता रहा। हर बार गुणनिधि बताता और जयवर्मा बाजी लगाता। जाने इसमें भी क्या खूबी थी! जो कुछ गुणनिधि कहता पासा भी यही बताता। जयवर्मा ने हजार मुहरों से अधिक जीतीं। वह खुशी खुशी घर गया। उसने गुणनिधि को गले लगा कर कहा-"भाई! तुम मेरे भाग्य हो, अगर हम दोनों साझा कर लें तो सारी की सारी काशी जीत सकते हैं।"

यद्यपि गुणनिधि को जुआ बिल्कुल पसन्द न था परन्तु अपने साथी की खुशी देखकर यह भी खुश होने लगा।



तब से रोज जयवर्मा अपने साथ जुए के लिए गुणनिधि को जाने के लिए सताने लगा। पहले कुछ दिन तो वह उसकी बात को न ठुकरा सका। इसलिए जयवर्मा भी जीतता रहा। यह साफ था कि गुणनिधि में कोई अजीब शक्ति थी, क्योंकि जो कुछ यह कहता यह ठीक निकलता। गुणनिधि स्वयं यह न जानता था कि उसमें यह शक्ति कब से आ गयी थी। जब जयवर्मा यह कहता "किस पर बाज़ी लगाने के लिए कहते हो" तुरन्त उसे ऐसा लगता, जैसे कान में कोई कुछ कह रहा हो, वह ही वह बता देता और वही निकलता भी।

हर रोज जयवर्मा हजारों मुहरें जीतने लगा। उसमें से आधा वह गुणनिधि को दे देता। जुए की आदत होनी ही नहीं चाहिये, अगर हो गई, तो कोई चाहे जीते या हारे, आदत और बिगड़ती जाती है। जयवर्मा पर इस व्यसन की सनक सवार थी। वह व्यापार छोड़कर, दिन रात जुआ खेलता। साथ वह गुणनिधि को भी जरूर ले जाता।

गुणनिधि के अध्ययन में विघ्न होने लगा। समय को व्यर्थ जाता देख वह



दुखी होने लगा। उसने जयवर्मा से एक दिन कहा-"तुमने जुए में अब काफी जीत ही लिया है। अब क्यों नहीं इसे छोड़ देते हो? चाहते हो तो मेरे हिस्सा का भी पैसा ले हो। मुझे पैसा नहीं चाहिए। तुम किसी कारोबार में अपनी जिन्दगी बसर करो। कब तक यों समय व्यर्थ करते रहोगे?"

"अरे! मुश्किल से एक मौका मिला है, और तुम उसे ही खोने के लिए कहते हो! हो सकता है कि जो अजीब शक्ति तुम में है, वह कल तुम में न रहे। तेरे लिए भी इस शक्ति को व्यर्थ जाने देना अच्छा नहीं है।" जयवर्मा ने कहा।

गुणनिधि को यह जानते देर न लगी कि उसका मित्र उसे आसानी से नहीं छोड़ेगा। उसने जयवर्मा की आदत छुड़ाने के लिए बहुत से उपाय सोचे। जब जयवर्मा यह पूछता-"किस पर लगाऊँ !" तो वह कहा करता "मुझे कुछ सूझ नहीं रहा है।" तुरन्त जयवर्मा रुक जाता, और जब तक वह न बताता, वह न खेलता। गुणनिधि ने सोचा कि यदि जयवर्मा दो-चार बार हार गया तो उसका



मेरी शक्ति पर विश्वास जाता रहेगा। इसलिए अगर वह एक बात सोचता, तो अपने दोस्त से दूसरी कहता। जयवर्मा भी वही करता। पर गुणनिधि के मुख से जो बात निकलती, वही ठीक होती और जयवर्मा जीता करता।

जैसे जैसे, जयवर्मा का जुए में जीतने के कारण उत्साह बढ़ता जाता था, जैसे जैसे पढ़ाई खराब होने के कारण गुणनिधि का उत्साह घटता जाता था। शीघ्र ही उसे पढ़ाई से, अपने मित्र जयवर्मा से काशी नगर से, जुए से, बड़ी जबर्दस्त घृणा होने लगी। वह घर और आत्मीयों के सपने देखने लगा।

वह अगर जाने के लिए कहता तो जयवर्मा उसे जाने न देता, और जब वह उसे जुआ छोड़ने के लिए कहता तो वह अनसुनी कर देता। एक दिन सवेरे सवेरे वह गङ्गा नदी के किनारे गया। वहाँ उसने एक माँझी से पूछा- "मुझे परले पार ले जाओ। तुम जितना माँगोगे, उतना दूँगा।"

गङ्गा में बाढ़ थी, तो भी माँझी ने धन के लालच में उसे नाव पर चढ़ा लिया। नाव परले पार की ओर चली।



गुणनिधि के उठने के कुछ देर बाद, जयवर्मा भी उठा। उसे सन्देह हुआ कि उसका साथी, बिना उसको बताये चला गया था। वह भी गङ्गा की ओर भागा। नदी की मँझधार में, नाव में गुणनिधि को देखकर, वह उसे जोर जोर से पुकारने लगा। चिल्लाता गया।

"मैं अपने देश जा रहा हूँ। वापिस नहीं आऊँगा।" गुणनिधि ने कहा।

जयवर्मा ने इधर-उधर देखा। आस पास कोई नाव न थी। उसे तैरना आता था। वह हिम्मत करके गङ्गा में कूद पड़ा और गुणनिधि की ओर तैरने लगा। वह गङ्गा के बीच में पहुँचा था कि एक मगर उसको नीचे खींचले गया।

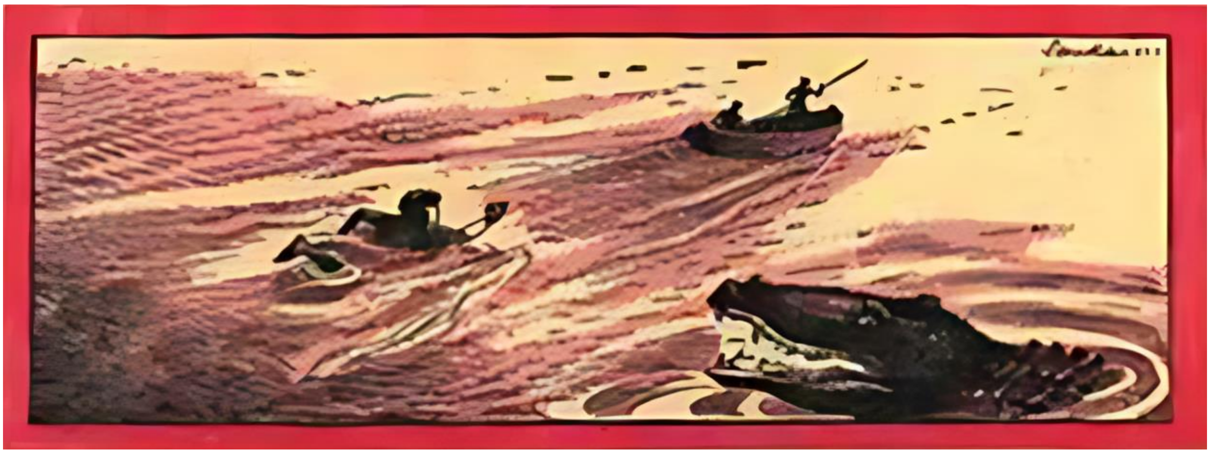
बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा- "राजा! जयवर्मा की मृत्यु का क्या कारण है? उसका व्यसन या उसका रुपये-पैसे का लालच या गुणनिधि की विचित्र शक्ति या गुणनिधि का मित्र के प्रति विश्वासपात! अगर जान-बूझकर जबाब न दिया तो तेरा सिर फूट जायेगा।"

"जयवर्मा की मृत्यु के कारण ये न थे। जुआखोर, लालची लोग इस दुनिया में बहुत हैं। गुणनिधि की अद्भुत शक्तियों ने जयवर्मा का भला ही किया था, बुरा नहीं। सच कहा जाय तो गलती जयवर्मा की ही है। गलती यह थी कि उसने गुणनिधि

की स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध लगा दिये थे। जो दूसरों की स्वतन्त्रता में दखल देते हैं, उनका बुरा ही होता है। जयवर्मा का हाल भी यही हुआ।" विक्रमार्क ने कहा।

राजा का मौन भङ्ग होते ही बेताल, शव के साथ अदृश्य हो गया।

(कल्पित)





[३]

[रूपधर ट्रोय नगर से घर के लिए निकला था। पर वह पहुँचा ऐसे द्वीप में जहाँ भाल लोचन राक्षस रहा करते थे। वह बारह सेनिकों के साथ एक भाल लोचन की गुफा में फँस गया। उस राक्षस ने उसके कई सैनिकों को हजम कर किया। आखिर रूपधर, उस राक्षस की आँख फोड़कर चालाकी के साथ, अपने बचे हुये सैनिकों को लेकर बाहर गया। फिर उस द्वीप को छोडकर चल पड़े।]

रूपधर के जहाज शीघ्र ही नौका द्वीप पहुँच गये। इस द्वीप के बारे में यह मशहूर था कि वह तैरा करता था। द्वीप में एक दुर्भेद्य काँसे का किला था। इस दुर्ग के राजा का नाम चित्राश्व था। दिगपालक उसके मित्र समझे जाते थे। इनके छह लड़के और छह लड़कियाँ थीं।

चित्राश्व ने रूपपर और उसके सैनिकों का स्वागत किया। उनको एक महीने तक अपना मेहमान बनाया। उन्होंने रूपधर से, ट्रोय नगर के युद्ध के बारे में, और विजयी ग्रीक योद्धाओं के बारे में सब कुछ जान लिया। गपशप में आराम से महीना गुजर गया।

आखिर एक दिन रूपधर ने चित्राश्व से कहा-"हम कब तक आप के अतिथि बनकर रहेंगे! हमें जाने की आज्ञा



दीजिये। यही नहीं, आपको हमारी यात्रा की सफलता के लिए हर तरह की मदद भी करनी चाहिए। हमने पहले ही समुद्र में बहुत से कष्ट भुगते हैं। हम भटके हैं।"

चित्राश्व सहायता करने के लिए मान गये। वायु देवता के घर से, हर प्रकार की बायु उनकी अज्ञा मानती थी। उन्होंने सिवाय एक बायु के, बाकी छे वायुओं को एक चमड़े के बैले में बाँधकर रूपधर को देते हुये कहा-"बेटा, एक बायु को, जो तुम्हारे जहाजों को स्वदेश सुरक्षित पहुँचाने में साधन होगी, छोड़कर, मैने छः वायुओं को इस चमड़े की थैली में रखा है। इसलिए तेरी यात्रा निर्बिघ्न होगी। घर तक पहुँचने तक इन वायुओं को बाहर न निकलने देना, सम्भलकर रहना, तुमपर कोई आपत्ति न आयेगी।"

रूपधर ने अपनी कृतज्ञता प्रकट की। वायुओं की थैली उसने स्वयं ले ली। अपने सैनिकों को लेकर वह यात्रा पर निकल पड़ा। जो चित्राश्व ने कहा था, वह ठीक निकला।

नौ दिन और नौ रात, निरन्तर यात्रा चलती रही। दसवें दिन, समुद्र में ईधिका का किनारा दिखाई दिया। रूपधर ने किनारे पर वह आग भी देखी, जो लोग हाथ सेंकने के लिए अक्सर जलाया करते थे।

स्वदेश को देखते ही रूपधर और उसके सैनिकों की खुशी का ठिकाना न रहा। थोड़ी देर में जहाज किनारे पर पहुँच जायेंगे, फिर हर कोई अपने अपने पर पहुँचेगा। वे तरह तरह के ख्वाब देखने लगे।

जब से रूपधर ने नौका द्वीप छोड़ा था उसने आँखें न मूँदी थी। बायुओं की थैली को अपने हाथ में रखकर ही, उसने नौ दिन सुरक्षित रखा। जब उसने जाना कि अब घर पहुँच ही जायेंगे, तो जाने उसको कहाँ से दुनियाँ भर की नींद आ गई। जहाजों के किनारे पर पहुँचने से पहले, रूपधर ने कुछ देर तक सोना चाहा।

उसने आँखें मींची ही थी कि उसके सैनिकों में कानाफूसी होने लगी।

"उस थैली में क्या है?" एक ने पूछा।

"और क्या होगा? सोना, और इधर उधर के इनाम।" दूसरे ने निस्सङ्कोच कहा।

"इस रूपधर का हर कोई हर कोई मित्र है। हर कोई इसे इनाम देता है। हमें कोई नहीं पूछता।" तीसरे सैनिक ने कन्धा हिलाते हुए कहा।

"वह नहीं, इसके साथ दस वर्ष घरवार छोड़कर, बाल-बच्चों से दूर, हम भी युद्ध करते रहे, पर देख यह कितना लूटकर साथ ला रहा है। हम खाली हाथ पहुँच रहे हैं। लूट तो खैर



लूटी हो। रास्ते भर भी इसने इनाम पाये।" चौथे सैनिक ने कहा।

"आखिर देखें तो इस थैली में है क्या!" पाँचवे सैनिक ने कहा।

यह बात सब मान गये। थैली का मुँह चान्दी के धागे से बँधा हुआ था। रूपधर के सैनिकों ने, बड़ी मेहनत करके, उसको खोला।

इतने में उस थैले में से भयङ्कर वेग और ध्वनि के साथ, वे वायु बाहर निकलीं। उन वायुओं के कारण, जहाज डाँवाडोल हो गये। जहाजों में लोग औंधे

मुँह गिरे, जैसे कोई सूखे पेड़ हो। उन्होंने अपने मुँह हाथों से ढक लिया। भयङ्कर तूफान सा आ गया।

इस भयङ्कर आवाज को सुनकर रूपधर जागा। पर वह आँखें न खोल सका। न वह ही देख सका कि वहाँ क्या हो रहा था। जब उस झञ्झा का प्रकोप कम हुआ तो जहाज फिर नौका द्वीप पहुँच रहे थे। रूपधर के सैनिक, पास आये स्वदेश से दूर होता देखकर बहुत रोये धोये। रूपधर इतना निरुत्साहित हुआ कि कुछ नहीं कहा जा सकता। उसकी निराशा की हद न थी।

रोने से क्या फायदा? जो होना था सो हो गया था। रूपधर और उसके सैनिकों ने पीने का पानी इकट्ठा कर भोजन बनाकर खाया। फिर रूपधर, अपने साथ दो सैनिकों को लेकर चित्राश्व के पास गया।

उन्होंने आश्चर्य से पूछा-"मैंने तुम्हारे पर पहुँचने के लिए आवश्यक मदद दी थी, अब फिर तुम यहाँ कहाँ से आए? बताओ।"

"महाराज! क्या बताऊँ? मैने गलती से दो क्षण आखें मूँदी। तुरन्त मेरे मूर्ख



सैनिकों ने थैली खोल दी, और वायुओं को छोड़ दीं। आप शक्तिवान हैं। आप फिर हमारी मदद कृपया कीजिये। नहीं तो हमें और कष्ट झेलने पड़ेंगे।" रूपधर ने कहा।

"छी, पापी! मेरा द्वीप छोड़कर तुरन्त तुम चले जाओ। देवता तुम से नाखुश हैं। मैं ऐसे व्यक्ति की कदापि सहायता न करूँगा।" चित्राश्व ने रूपधर को दुत्कार दिया। वह बहुत कुपित हुआ। रूपधर ने बहुत मनाया। पर चित्राश्व ने उसकी एक न सुनी।

जहाजों ने फिर वापसी यात्रा शुरू की। पर किसी में कोई ओश न था। हवा बिलकुल अनुकूल न थी, इसलिये चप्पू चलाते चलाते सैनिकों के हाथ में छाले पड़ गये।

छः दिन लगातार समुद्र में यात्रा करके, रूपधर की टोली, आखिर एक द्वीप में पहुँची। यह उत्तरी ध्रुव का एक प्रान्त था। यहाँ अनेक मासों का दिन होता है। सूर्य छुपते ही फिर उदय होता है। कहाँ छुपता है, और कहाँ उगता है, यह अपरिचित लोगों के लिए जानना कठिन है।





रूपधर के जहाज जहाँ लगे थे, यहाँ समीप ही, दो पहाड़ों की चोटियाँ थीं। नडके बीच में से एक जहाज के जाने का ही रास्ता था। उसके बाद विशाल समुद्र झील के रूप में था। वहाँ जहाजों के लिए अच्छा बन्दरगाह भी था। बाकी जहाजों को उसने बन्दरगाह में जाने दिया। परन्तु उसने अपना जहाज, बाहर, पहाड़ी के बहानों से बँधवा दिया।

उसके बाद, वह पास वाली चोटी पर चढ़ गया। उसने चारों तरफ देखा। दूर तक न कोई पेड़ था, न किसी प्रकार की हरियाली ही। परन्तु बहुत दूरी पर, उसे आकाश में धुआँ उड़ता दिखाई दिया। इसलिये यह बात साफ थी कि उस ईलाके में मनुष्य रहते थे। उसने तीन सैनिको को बुलाकर कहा-"तुम जहाँ धुआँ निकल रहा है, वहाँ जाओ, और मालूम करो कि वहाँ किस प्रकार के लोग रहते हैं। सभ्य या असभ्य !"

कुछ दूर जाने पर, उनको एक कच्चा रास्ता दिखाई दिया। उस रास्ते पर जाते जाते थोड़ी दूर बाद कुछ मकान आये। उन मकानों के पास एक नाले से, एक लड़की पानी ले जाती दिखायी दी। द्दस्य सुन्दर था।

"इस ग्राम का राजा कौन है। उनका घर कहाँ है? हम उन्हें देखना चाहते हैं।" सैनिकों ने उस लड़की से पूछा। उसने उनके प्रश्नों के उत्तर में एक ऊँचे घर की छत दिखायी। शायद यह उनकी भाषा न समझती थी।

उनके उस घर में घुसते ही, उन्हें एक राक्षसी-सी कोई स्त्री दिखाई दी। उसे देखते ही उन्हें घृणा हुई। वह बहुत ही बदसूरत थी।



उस स्त्री ने तुरन्त किसी को भिजवाकर अपने पति को बुलवाया। उसने आते ही रूपधर के सैनिकों में से एक को पकड़ा, उसे फर्श पर पीटकर मारकर वह अपने रसोई घर में ले गया और शायद उसको पकाकर खा गया। यह देख दोनों, प्राण बचाकर, अपने जहाजों के पास भागे।

परन्तु इस बीच, राक्षस ने गली में आकर जोर से आवाज की। यह सुनते ही वहाँ हजारो राक्षस जमा हो गये। जो जहाँ था, वहाँ से भागा। वे बन्दरगाह के चारों ओरवाले पहाड़ों पर चढ़ गये और जहाजों पर दनादन पत्थर फेंकने लगे। पत्थर इतने बड़े थे कि मनुष्य मुश्किल से उठा सकता था। पर उनके हाथ में वे कङ्कड़-से लगते थे।

बन्दरगाह में जितने जहाज थे, सब तोड़ दिये गये। रूपधर के सैनिक पत्थरों द्वारा कुचल दिये गये। राक्षस, उनको अपने घर उठा ले गये।

बन्दरगाह में यह हत्याकाण्ड देखकर, रूपधर ने सोचा कि वहाँ रहना खतरे से खाली न था। उसने जहाज की रस्सियों तोड़ दी। और उसने अपने बचेखुचे आदमियों से कहा-"बप्पू चलाओ, जल्दी चलाओ। नहीं तो जान नहीं बचेगी।"

उन्होंने भी जी जान से पप्पू चलाये, और जहाज को समुद्र में ले गये। सिवाय उस जहाज के रूपधर के अन्य जहाज नष्ट हो गये थे और उनमें जितने ग्रीक थे, उनकी बुरी तरह मौत हुई।

(अभी और है)





खरबूजों का सौदा

किसी जमाने में एक सुल्तान था। यह एक दिन शिकार खेलने जा रहा था। रास्ते में उसे एक किसान दिखाई दिया। वह एक गधे को हॉक कर ले जा रहा था। उस पर कोई गट्ठर लदा था।

सुल्तान ने किसान से पूछा-"क्यों भाई। इस गट्ठर में क्या है?"

"बाबू! इसमें खरबूज हैं। मेरे खेत की यह पहली पैदाइश है: मौसम से पहले हुई है, इसलिए में इन्हें ले जाकर सुल्तान को बेचना चाहता हूँ। कहा जाता है कि ये बड़े दानी हैं। उम्मीद है कि अच्छे भाव पर ही खरीदेंगे।" किसान ने कहा। क्योंकि उसने पहिले कभी सुलतान को न देखा था, इसलिए यह उसे न पहचान सका।

"सुल्तान, तुम्हारा क्या ख्याल है, इन सरबूजों को कितना देकर खरीदेंगे?" सुल्तान ने पूछा।

"कम से कम क्या हज़ार सोने की मोहरें भी न देंगे!" किसान ने कहा।

"अगर सुल्तान कहे कि यह बहुत अधिक है, तब क्या करोगे?" सुल्तान ने पूछा।

"अच्छा, तो पाँच सौ माँगूँगा।" किसान ने कहा।

"यदि कहे कि यह भी अधिक है तो!"

"तीन सौ देने के लिए कहूँगा।"

"इसे भी अधिक कहें तो?"

"सौ देने के लिए कहूँगा।"

"और इसे भी अधिक कहें तो?"

"पचास माँगूँगा।"

"इसे भी अधिक कहें तो?"

"तीस माँगूँगा।"

"और अगर इसे भी अधिक बताये तो?"

श्री नरेन्द्र मोहन सक्सेना

"अपने गधे को सिंहासन में बिठाकर भाग जाऊँगा।" किसान ने कहा।

सुल्तान जोर से ठट्टा मार कर हँसा उसने किसान को जाने दिया। वह शिकार छोड़कर एक और रास्ते से घर पहुँचा आते ही द्वार पर पहरेदारों से कहा-"मेरे लिए एक किसान गधा लेकर आयेगा। उसे सीधे मेरे पास ले आना।"

एक घण्टे बाद, किसान सुल्तान के महल के पास गया। उसने सुल्तान से मिलना चाहा। पहरेदारों ने उसे और उसके गधे को अन्दर जाने दिया।

तब तक सुल्तान ने अपने कपड़े बदल लिए थे। इसलिए किसान उसे न पहचान सका। वह खरबूज के गट्ठर को हाथ में लेकर सुल्तान के सामने खड़ा हो गया।

"लगता है, तुम मेरे लिए कुछ लाए हो, क्या है यह?" सुल्तान ने पूछा।

"हुजूर की मेहरवानी हो तो मैं अपने खेत की पहली पैदाइश देने आया हूँ।" किसान ने कहा।

"तुम्हारा क्या ख़याल है कि मेरी मैहरवानी कितनी बड़ी होनी चाहिए?" सुल्तान ने पूछा।



"हजार दीनारें।" किसान ने कहा।

"यह तो बहुत अधिक है।" सुलतान ने कहा।

"पाँच सौ।"

"यह भी अधिक है।"

" तीन सौ।"

"यह भी अधिक है।"

"एक सौ।"

"यह भी अधिक है।"

"पचास।"

"यह भी अधिक है।"

"तीस।"

"यह भी अधिक है।"

"उस मनहूस चेहरेवाले का रास्ते में मिलना बुरा हुआ। अगर तीस दीनारें नहीं देंगे तो सरबूज भी न दूँगा। यही पक्की बात है।" किसान ने कहा।

सुल्तान हँसा तो, पर उसने कोई जवाब न दिया। यह देख किसान ने सुल्तान के मुँह को गौर से देखा। यह जान गया कि वह आदमी ही, जो रास्ते में दिखाई दिया था, सुल्तान था।

"हुजूर! मेहरबानी करके मुझे तीस दीनारें दिल्वाइये। नहीं तो.... मेरा गधा बाहर ही बँधा है!" उसने कहा।

सुल्तान हँसते हँसते लोट-पोट हो गया। नीचे गिर गया। उसने खजाञ्ची को बुलाकर कहा-"इस किसान को हज़ार दीनारें दे दो। उसके बाद, तीन सौ सौ, पचास, तीस, दीनारें, एक के बाद एक दे दो!"

जब एक बोरी खरबूजों के लिए उसे उन्नीस सौ अस्सी दीनारें मिली तो उसके मुख से बात न निकली। वह सुल्तान को बार बार सलाम करता चला गया।





काजी की सूझ

एक नवाब के यहाँ एक वज़ीर था। उसने एक दिन बहुत ही खूबसूरत दासी खरीदी। यह बात नवाब को मालूम हो गई। उस दासी को स्वयं देखने के उद्देश्य से उसने बज़ीर के पास कहला भेजा, आज रात में तुम्हारे पर खाना खाने आऊँगा।

वज़ीर ने नवाब के लिए तरह तरह की तरकारियाँ, माँस व पेय तैयार करवाये। पेय देने के लिए नई दासी को नियुक्त किया। भोजन खतम करके, दोनों पेयों का सेवन करते करते गप्पें मारने लगे। यकायक नवाब ने कहा-"बजीर, इस दासी लड़की को हमें बेच दो। जितना दाम तुमने उसके लिए दिया है, मैं ठीक उसका दुगना दूँगा।"

"हुजुर, माफ फरमायें। मैं इस दासी को बेचना नहीं चाहता।" वज़ीर ने कहा।

"तो इसे भेंट कर दो।" नवाब ने कहा।

"मैं यह भी नहीं करना चाहता।" बजीर ने बिना किसी सङ्कोच के कहा।।

बज़ीर का रुख देखकर नवाब आग बबूला हो गया। "अगर तुमने इस दासी को मुझे न बेचा, या भेंट में न दी तो मैं अपनी बड़ी बेगम को तलाक दे दूँगा।" नवाब ने कसम खाई।

"मैं भी अपनी पत्नी, बाल-बच्चों को छोड़ दूँगा, परन्तु इस दासी को आपको न दूँगा। अगर मैंने दे दी, तो मैं ख़ुदा को धोखा दे रहा हूँगा।" बजीर ने कहा।

दोनों ने खूब शपथें की। आखिर वे पछताने लगे कि वे क्यों इतने बड़बड़ाये थे।

"अब क्या किया जाय? हम दोनों कैसे बिना अपनी प्रतिज्ञायें तोड़े इन उलझनों से बाहर पड़ें?" नवाब ने कहा।

कुमारी रजिया

"इसका उपाय केवल काज़ी ही बता सकता है। हुजूर का हुकुम हो तो उन्हें बुलाता हूँ।"

नवाब मान गये। वजीर ने काज़ी को बुलवाया। काजी ने सब-कुछ मालूम कर लिया। "यह ऐसी कोई बड़ी समस्या नहीं है। वजीर यदि दासी को आधा बेच दें और आधा भेंट में दे दें, तो समस्या सुलझ आयेगी।" काजी ने सलाह दी।

नवाब इस सलाह पर बड़ा खुश हुआ। उसने कहा-"वाह! यह अच्छी सलाह है। अब एक और सलाह बताओ। जब तक यह दासी रहेगी, मेरे जनाने में घुस न सकेगी। कानूनी तौर पर इसको स्वतन्त्र करने के लिए बहुत-सी बातें हैं। इसके लिए भी कोई रास्ता बताओ।"

"इसका एक ही आसान रास्ता है- "इसकी अभी किसी के साथ शादी करवाइये। इसकी गुलामी भी तुरन्त खतम हो जायेगी। फिर उससे इसको तलाक दिल्वाइये। तब हुजूर इससे शादी कर सकेंगे।" काजी ने कहा।

"बहुत अच्छा एक सिपाही को बुलवाइये।" नवाब ने वज़ीर से कहा।



बज़ीर ने अपना एक सिपाही बुलवाया। उसके साथ दासी की शादी कर दी गई। काजी ने कहा- "अब यह दासी नहीं है। आज़ाद है। अब सिपाही से इसको तलाक दिलवाइये।"

पर सिपाही इसके लिए न माना। "मेरी पत्नी बहुत खुबसूरत है। मैं उसे कतई नहीं छोड़ना चाहता।" उसने कहा। उसे बहुत डराया धमकाया गया। पर उसने न सुनी।

नवाब खौल उठा। उसने काजी से कहा-"काजी, क्या तेरी यही सलाह है! अगर तुमने यह समस्या न सुलझाई तो मैं तुम्हारे सिर को किले के बाहर लटकवा दूँगा।"

"हुजूर, जल्दी कर रहे हैं। यह समस्या कोई खास कठिन नहीं है। अगर बज़ीर इस सिपाही को मेरा गुलाम बना दें, तो समस्या आप ही हल हो जायेगी।" काजी ने कहा।

"ले जाओ।" वजीर ने कहा।

काजी ने दासी की ओर देखकर कहा-"यह सिपाही मेरा गुलाम है, इसे मैं तुम्हें दे देता हूँ लेती हो?"

"हाँ, हाँ, जरूर!" उसने कहा।

"तब क्या? कानून के मुताबिक तेरा गुलाम तेरा पति नहीं हो सकता। तुम्हारी शादी इस तरह रद्द हो गई, और मेरा काम भी खतम हो गया।" कहता हुआ काजी उठा।

नवाब की खुशी का ठिकाना न था। उसने काजी को रोककर कहा- "हमारा इन्साफ कर, अच्छी सलाह देने के लिए यह को इनाम।" उसने एक थैली में से सोने की मुहरें निकालकर उसे दीं।



CHANDAMAMA (Hindi) OCTOBER 1957 Regd. No. M. 6452

